17 वां अंक

आईएसओ 9001:2008 प्रमाणित संस्थान

मरु बागवाणी

राजभाषा पत्रिका

(2023-24 एवं 2024-25)

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

बीछवाल, बीकानेर 334 006 (राजस्थान)

मरु बागवाणी

आईएसओ 9001:2008 प्रमाणित संस्थान

सप्तदश अंक

मरु बागवानी

राजभाषा पत्रिका

(2023-2024 एवं 2024-25)

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर-334 006 (राजस्थान)

मरू बागवाणी

सप्तदश अंक

वर्ष 2023-24 एवं 2024-2025

प्रकाशक

डॉ. जगदीश राणे

निदेशक

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर-334006 (राज.)

दूरभाष-0151-2250147, 2250960, फैक्स-0151-2250145

ईमेल-ciah@nic.in

प्रधान सम्पादक

डॉ. जगदीश राणे

सह-सम्पादक

डॉ. अनिता मीणा

डॉ. अजय कुमार वर्मा

श्री रूपचन्द बलाई

शब्द संधारण/परिकल्पना और छायांकन

भोजराज खत्री

संजय पाटिल

मुद्रक

आर.जी. एसोसिएट्स

बीकानेर (राज.)

मो. 9414603856

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार लेखकों के अपने हैं। इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं हैं।

अनुक्रमणिका

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	संस्थान की प्रमुख राजभाषा गतिविधियां	7
2.	आत्मनिर्भरता से विकसित भारत यात्रा में बागवानी का योगदान	9
3.	शुष्क क्षेत्रों की बागवानी में ऊन अपशिष्ट का उपयोग: सतत अर्थव्यवस्था की दिशा में एक अभिनव पहल	14
4.	मरुभूमि में खेजड़ी का सामाजिक, आर्थिक एवं परिस्थितिकी महत्त्व	17
5.	कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते आयाम	20
6.	भारत में उद्यानिकी क्रांति: सतत विकास के लिए स्वच्छ पौधा कार्यक्रम (सीपीपी)	25
7.	स्वास्थ्य के लिए जरूरी है पोषण वाटिका	28
8.	बेबी कॉर्न की उत्पादन तकनीक	33
9	फालसा में छंटाई: बेहतर फसल के लिए जरूरी कदम	36
10.	फोग: थार मरुस्थल की एक बहुपयोगी दुर्लभ वनस्पति	38
11.	पीलू: मरुस्थल की अनमोल धरोहर और औषधीय वरदान	40
12.	सघन बागवानी समय की मांग	43
13	ड्रैगन फ्रूट: भविष्य का सुपरफूड	46
14.	दमस्क गुलाब की खेती : एक सम्पूर्ण गाइड	49
15	सब्जियों के उत्पादन में बीज उपचार की भूमिका	53
16.	पॉली हाउस में सूत्रकृमि से होने वाली समस्याएं एवं उनका उपचार	56
17.	किसान अगेती आलू लगायें और लाभ कमायें	58
18	ट्राइकोडर्मा एक उपयोगी सूक्ष्मजीव	64
19.	क्षारीय भूमि सुधार में नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद की भूमिका: एक सतत विकल्प	67
20.	लौकी के रोग एवं कीटों का प्रबंधन	70
21.	प्राकृतिक खेती का जादू (कविता)	72
22.	शुष्क क्षेत्र में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत के उपयोग से लेट्यूस की खेती	73
23.	बीकानेर में खजूर पौधारोपण सारांश और संभावनाएं	78

डॉ. जगदीश राणे
निदेशक

निदेशक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान)
bZ esy% ciah@nic.in, nwjHkk"k: 0151 2250147 QSDl : 0151-2250145

प्राक्कथन

कृषि और विज्ञान एक–दूसरे के पूरक हैं। आज कृषि क्षेत्र में चुनौतियाँ निरंतर बढ़ रही हैं, जिनके समाधान हेतु वैज्ञानिक दृष्टिकोण और अनुसंधान की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो गई है। खेती–किसानी में नवीन प्रयोगों एवं अनुसंधानों की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करने में वैज्ञानिकों का योगदान विशेष उल्लेखनीय है। अनुसंधान कार्यों को किसानों और खेतों तक पहुँचाने में भाषा एवं साहित्य का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। भाषा, अनुसंधान और समाज के बीच सेतु का कार्य करती है। यही कारण है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों द्वारा किए जा रहे अनुसंधान कार्यों को व्यापक स्तर पर जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए राजभाषा हिंदी का उपयोग विशेष प्रभावी सिद्ध हो रहा है। हिंदी को लोकसंपर्क की भाषा कहा जा सकता है। इसी दिशा में केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' किसानों को शुष्क बागवानी से संबंधित नवीनतम अनुसंधान और प्रौद्योगिकीय जानकारी मातृभाषा में उपलब्ध कराने का सराहनीय प्रयास है।

यह पत्रिका पिछले दो दशकों से निरंतर प्रकाशित हो रही है। प्रस्तुत संयुक्त अंक (सत्रहवाँ अंक) में पूर्व अंकों की प्रतिक्रियाओं और पाठकों के रचनात्मक सुझावों को सम्मिलित करते हुए लेखों की गुणवत्ता और प्रामाणिकता को और सुदृढ़ करने का प्रयास किया गया है। हिंदी भाषा की वैज्ञानिक शब्दावली और सरल अभिव्यक्ति के माध्यम से इसमें संकलित वैज्ञानिक साहित्य को समझना और भी सहज हो गया है। इस अंक में विविध विषयों से संबंधित लेख संकलित कर उन्हें पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। हमें विश्वास है कि यह अंक भी पूर्ववर्ती अंकों की तरह ही पाठकों के लिए उपयोगी और रोचक सिद्ध होगा।

मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका के माध्यम से न केवल शुष्क बागवानी के विकास को प्रोत्साहन मिलेगा, बल्कि राजभाषा हिंदी के संवर्द्धन और प्रसार को भी बल प्राप्त होगा। इस संयुक्त अंक के सफल प्रकाशन हेतु इससे जुड़े सभी सहयोगियों को मैं हृदय से बधाई और शुभकामनाएँ देता हूँ।

जगदीश राणे

(जगदीश राणे)

सम्पादकीय

भाषा ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति एवं प्रशासन के प्रभावी संप्रेषण का सशक्त माध्यम है। यह केवल विचारों के आदान- प्रदान का साधन ही नहीं बल्कि समाज को एक सूत्र में जोड़ने तथा ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने का महत्वपूर्ण आधार भी है। राजभाषा हिन्दी देश के विशाल जनसमुदाय की भाषा होने के कारण वैज्ञानिक एवं तकनीकी जानकारी को सरल सहज एवं व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रभावी माध्यम है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीन आईसीएआर-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर अनुसंधान, शिक्षा एवं कृषि प्रसार के साथ-साथ राजभाषा हिन्दी के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए भी निरंतर प्रयासरत है। संस्थान में राजभाषा के संवर्धन हेतु विभिन्न प्रतियोगिताओं, कार्यशालाओं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा जागरूकता गतिविधियों का नियमित आयोजन किया जाता है। इन्हीं प्रयासों की एक महत्वपूर्ण कड़ी संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'मरु बागवाणी' है। जिसका उद्देश्य शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों की बागवानी से संबंधित नवीन अनुसंधानों, उन्नत उत्पादन तकनीकों तथा कृषक हितैषी वैज्ञानिक नवाचारों को सरल एवं सुबोध हिन्दी में किसानों, वैज्ञानिकों, विद्यार्थियों एवं अन्य हितधारकों तक पहुँचाना है।

प्रस्तुत अंक में संस्थान की राजभाषा गतिविधियों की प्रमुख उपलब्धियों के साथ-साथ शुष्क बागवानी के विविध समसामयिक विषयों पर विशेषज्ञों के शोधपरक एवं उपयोगी लेख सम्मिलित किए गए हैं। इनमें फल एवं सब्जी फसलों का वैज्ञानिक उत्पादन, कीट एवं रोग प्रबंधन, प्राकृतिक एवं सतत कृषि, पोषण वाटिका, जलवायु-अनुकूल कृषि तकनीकें, संसाधन संरक्षण, महिला सशक्तिकरण तथा कृषि में नवीन प्रौद्योगिकियों के उपयोग जैसे महत्वपूर्ण विषयों को स्थान दिया गया है। हमें विश्वास है कि इन लेखों से पाठकों को नवीन वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त होगी तथा कृषकों द्वारा उन्नत तकनीकों को अपनाने में भी सहायता मिलेगी।

संस्थान का उद्देश्य प्रयोगशाला से खेत तक वैज्ञानिक तकनीकों का प्रभावी हस्तांतरण करते हुए कृषि एवं बागवानी के सतत विकास में योगदान देना है। 'मरु बागवाणी' इस दिशा में वैज्ञानिकों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं कृषकों के मध्य ज्ञान के आदान-प्रदान का एक सशक्त मंच है। हमें आशा है कि पत्रिका का यह अंक भी पूर्ववर्ती अंकों की भाँति पाठकों के लिए उपयोगी एवं प्रेरणादायक सिद्ध होगा। आपके बहुमूल्य सुझाव एवं रचनात्मक प्रतिक्रियाएँ पत्रिका की गुणवत्ता को और अधिक समृद्ध बनाने में हमारा मार्गदर्शन करती रहेंगी।

सम्पादक मण्डल

संस्थान की प्रमुख राजभाषा गतिविधियां

txnh'k jk.ks ,oa vt; dqekj oekZ
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

fgUnh dk;Z'kkyk dk vk;kstu

कलैण्डर वर्ष 2024 के दौरान संस्थान में कार्यरत अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने की प्रेरणा के लिए राजभाषा विभाग के निर्देशानुसार दो त्रैमासिक कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। वर्ष 2024 की पहली कार्यशाला का आयोजन 13 सितम्बर 2024 को हिन्दी भाषा संवाद विषय पर किया गया था जिसमें डॉ. ब्रजरतन जोशी, सह.आचार्य डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर ने उपरोक्त विषय पर व्याख्यान दिया। वर्ष 2024 की दूसरी कार्यशाला का आयोजन दिनांक 31 दिसम्बर 2024 को किया गया जिसमें प्रो. नंदिता सिंघवी, पूर्व प्राचार्य,डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर ने विज्ञान में हिन्दी भाषा की भूमिका विषय पर व्याख्यान दिया।

Çgnh dk;Z'kkyk ds nkSjku O;k[;ku nsrs vfrfFk x.k ,oa laLFkku ds funs'kd MkW- txnh'k jk.ks

fgUnh i[kokM+k vk;kstu

संस्थान में दिनांक 13 से 27 सितम्बर 2024 तक हिंदी पखवाडा आयोजित किया गया। इस दौरान 13 सितम्बर 2024 को हिन्दी कार्यशाला एवं हिन्दी पखवाड़ा उद्घाटन समारोह का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. बृज रतन जोशी, प्राध्यापक, डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर द्वारा "हिन्दी भाषा संवाद" विषय पर व्याख्यान दिया गया। कार्यशाला में मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए डॉ. बृज रतन जोशी ने भाषा प्रबंधन के विभिन्न आयामों पर चर्चा करते हुए कहा कि हिन्दी भाषा को मुख्य धारा में लाते हुए आगे बढ़ाने की जरूरत है ताकि बदलते समय एवं तकनीकी के साथ हिन्दी अपनी सोच व विवेक से आगे बढ़े। संस्थान के निदेशक डॉ. जगदीश राणे ने इस अवसर पर अपने उद्बोधन में हिन्दी भाषा के उपयोग पर जोर देते हुए कहा कि संस्थान द्वारा विकसित तकनीकियों को किसानों तक पहुंचाने में हिन्दी का महत्वपूर्ण योगदान है अतः हमें निरंतर हिन्दी भाषा में प्रकाशन को बढ़ावा देना चाहिए। संस्थान के राजभाषा प्रभारी एवं आयोजक सचिव डॉ. अजय कुमार वर्मा ने हिन्दी भाषा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए बताया कि इस कार्यशाला के साथ ही संस्थान आज से 27 सितंबर तक हिन्दी पखवाड़े का भी आयोजन कर रहा है। पखवाड़े के इस आयोजन में विभिन्न प्रतियोगिताएं रखी गयी थी, जिनमें संस्थांन के सभी कार्मिकों ने भाग लिया। दिनांक 18 सितम्बर 2024 को हिन्दी शब्द लेखन प्रतियोगिता, दिनांक 20 सितम्बर 2024 को हिन्दी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता एवं मरु बागवानी शोध लेख प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

lekiu lekjksg ds nkSjku fofHkUu çfr;ksfxrkvksa esa fotsrkvksa dh ?kks"k.kk dh xÃ tks fuEukuqlkj jgsA

çfr;ksfxrk	iqjLdkj	fotsrk
हिन्दी शब्द लेखन		
वर्ग 'अ'	प्रथम	श्री राजकुमार
	द्वितीय	श्री लोकेश एवं श्री मालीराम
	तृतीय	श्री प्रेम, बजरंग एवं अखेराम
वर्ग 'ब'		
	प्रथम	श्री मिलन शर्मा एवं श्रीमती पूजा जोशी
	द्वितीय	श्री स्वरूप कुमार
	तृतीय	श्री शिवलाल एवं श्री महेश कुमार
वर्ग 'स'	प्रथम	डॉ हनुमान राम
	द्वितीय	डॉ कमलेश कुमार एवं श्री महेंद्र कुमार
	तृतीय	डॉ चेतराम एवं डॉ पवन कुमार
मरु बागवानी		
शोध लेख	प्रथम	डॉ डी के सरोलिया
	द्वितीय	डॉ पवन सिंह गुर्जर
	तृतीय	डॉ एम के बेरवाल
हिन्दी सामान्य ज्ञान		
वर्ग 'अ'	प्रथम	श्री भूपेन्द्र कुमार
	द्वितीय	श्री मालीराम एवं श्री अखेराम
	तृतीय	श्री राधाकिशन एवं सुश्री लकी
वर्ग 'ब'		
	प्रथम	श्री पी आर सिंह
	द्वितीय	श्री स्वरूप कुमार
	तृतीय	श्री महेश कुमार
वर्ग 'स'		
	प्रथम	डॉ हनुमान राम
	द्वितीय	डॉ कमलेश कुमार एवं श्री महेंद्र कुमार
	तृतीय	डॉ चेतराम एवं डॉ पवन कुमार

आत्मनिर्भरता से विकसित भारत यात्रा में बागवानी का योगदान

nhid dekj ljkfy;k] vt; dekj oek ,o egæ dekj pk/kjh
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

भारत विभिन्न जलवायु प्रदेशों का देश है, जहां विश्व में उगाई जाने वाली लगभग 80 प्रतिशत फसलें भारत में भी हो सकती है। व्यावसायिक रूप से स्वतंत्रता के बाद खाद्यान्न फसलों के उत्पादन पर विशेष बल दिया गया तथा हरित क्रांति का सूत्रपात हुआ, जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त की गई। इसके पश्चात 1980 के दशक में तिलहन एवं दुग्ध उत्पादन को बढ़ावा देने हेतु क्रमशः पीली क्रांति और श्वेत क्रांति के माध्यम से आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। आगे चलकर सुनहरी क्रांति के अंतर्गत उद्यानिकी फसलों को प्रोत्साहित करने के प्रयास किए गए, जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 2012–13 से उद्यानिकी फसलों का उत्पादन खाद्यान्न फसलों की तुलना में निरंतर अधिक होता जा रहा है। जो इस बात को सिद्ध करता है कि बागवानी फसलें विकास की ओर कदम बढ़ा चुकी है तथा भारत की आत्मनिर्भरता से ओतप्रोत विकास यात्रा को गति देने के लिए तैयार है।

भारत विश्व में इन फसलों (फल व सब्जी) के उत्पादन का दूसरा बड़ा राष्ट्र है साथ ही कुछ बागवानी फसलें जैसे आम, केला, पपीता, काजू, सुपारी, काजी मिर्च,

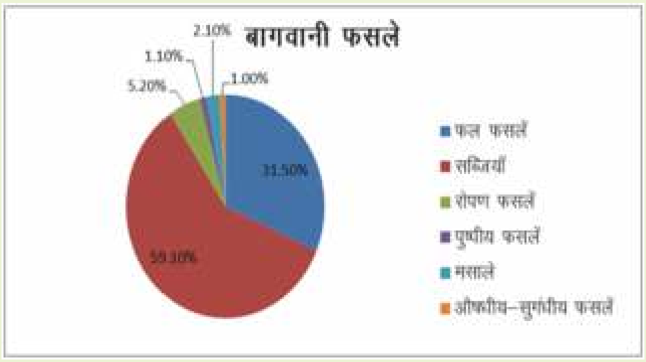

आलू, भिंडी में प्रथम स्थान रखता है।

बागवानी फसलों का सतत् रकबा बढ़ रहा है, जिससे उत्पादन स्तर में बढ़ोत्तरी हुई है। उदाहरण स्वरूप 2002–03 वर्ष में कुल बागवानी फसलों का उत्पादन 150 मि. टन था जों आज 350 मि. टन के पार है। यह सब किसानों, वैज्ञानिकों व सरकार के सामुहिक प्रयासों का नतीजा है जो इन फसलों के क्रमोन्नत विकास व सम्भावनाओ को परिलक्षित करता है।

भारत की स्वतंत्रता के 100 वें वर्ष, अर्थात वर्ष 2047 तक भारत को एक विकसित राष्ट्र की श्रेणी में स्थापित करने के लक्ष्य की दिशा में एक सशक्त प्रयास किया जा रहा है। इस उद्देश्य की ओर संकेत करते हुए 23 जुलाई, 2047 के बजट में भारत की तत्कालीन वित्त मंत्री श्रीमती निर्मला सीतारमण ने स्पष्ट किया कि आगामी 25 वर्षों के लिए देश के विकास का एक समग्र खाका तैयार करने हेतु नीति आयोग द्वारा विजन इंडिया/2047 परियोजना की शुरुआत की गई है। वर्तमान सरकार ने विकास को एक समग्र एवं जन केंद्रित दृष्टिकोण से प्राथमिकता दी है, जिसमें आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक सभी आयामों को समाहित किया गया है। इस विजन दस्तावेज में भारत की नौ प्रमुख प्राथमिकताओं को रेखांकित किया गया है, जिनमें उत्पादकता में वृद्धि, रोजगार सृजन, कौशल विकास, मानव संसाधन विकास, विनिर्माण, शहरी विकास, ऊर्जा सुरक्षा, सुदृढ़ अवसंरचना, नवाचार तथा अगली पीढ़ी के लिए सुधार जैसे प्रमुख बिंदु शामिल हैं। इन सभी प्राथमिकताओं के संदर्भ में यह प्रश्न अत्यंत प्रासंगिक है कि बागवानी फसलें किस प्रकार योगदान दे सकती हैं, जिससे भारत न केवल विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की दिशा में अग्रसर हो, बल्कि समृद्धि और कल्याण के सूचकांकों में भी बेहतर स्थान प्राप्त कर सके। विजन इंडिया/2047 के प्रारूप में विकसित भारत के लिए जिन नए उभरते क्षेत्रों को चिन्हित किया गया है, उनमें बागवानी फसलों की भूमिका एवं उनके संभावित योगदान का विस्तृत विवरण निम्नलिखित अनुभागों में प्रस्तुत किया जा रहा है।

1- mRikndrk o vudfyr [krh

विभिन्न कृषि व संबंधित खेती में उत्पादकता की बात करे तो बागवानी फसलें उच्च उत्पादकता में सक्षम है तथा प्रतिकूल मौसम की दशाओं में अधिक सहनशीलता प्रदर्शित करती है। सरल घरेलू उत्पाद में 13.1% कुल फसल क्षेत्र से बागवानी का योगदान 30.4% है। बागवानी फसलों की उत्पादकता जों वर्ष 2001–02 में 8.8 टन/हें थी वो वर्तमान 2023–24 में 12.3 टन/हेक्टर है। इनमें यदि फल व सब्जियों की वर्तमान में उत्पादकता क्रमशः 15.9 व 18.4 टन/हें. है। बागवानी फसलें एकवर्षीय से लेकर बहुवर्षीय प्रकृति की है जिनमें विषम जलवायु परिस्थितियों को सहन

करने की भी क्षमता है। इसी के मद्देनजर हाल ही में भारत के प्रधानमंत्री द्वारा 27 बागवानी फसलों की 40 किस्मों का विमोचन किया जो उच्च उपज के साथ जलवायु अनुकूलित है।

2- jkstxkj dkS'ky fodkl

आज समूचा विश्व बेरोजगारी की समस्या से जूझ रहा है जिसमें विशेषतः विकासशील देश, जहां कृषि में 45% से अधिक मानव श्रम शक्ति जुड़ी है उसमें छुपी हुई बेरोजगारी देखने को मिलती है जिसका तात्पर्य क्षमता अनुरूप कार्य नहीं है। परन्तु बागवानी फसलें (सब्जी, फल, पुष्प आदि) उत्पादन में खाद्यान फसलों से अधिक मानव श्रम की आवश्यकता है। अतः ये फसलें रोजगार परक फसलें हो सकती है।

क्र.सं.	फसल	मानव दिवस आवश्यकता (दिन)
1	गेहूं	143
2	सब्जी फसलें	525
3	फलदार	450
4	औशध फसलें	300

बागवानी फसलों की खेती फसल व परिस्थिति अनुरूप नये आयाम जुड़ते है जिसको समझने व इच्छित उत्पादन हेतु समय–समय पर प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। वर्तमान में कौशल विकास के सेक्टर जैसे नर्सरी, संरक्षित खेती, जैविक खेती, ई–खेती आदि है। विकसित भारत में कौशल विकास में कार्यबल में महिलाओं के लिए विशेष कौशल कार्यक्रमो (मशरूम, नर्सरी, गृहवाटिका, घरेलू प्रसंस्करण ईकाईयां) में महिला स्वयं सहायता समूह के उद्योगों व उनके लिए बाजार पहुंच का बढ़ावा देने का प्रयास किया जा रहा है। अन्य क्षेत्रों में विशेषतः गुणवत्तायुक्त शहद उत्पादन और उससे किसानों को होने वाली आमदनी के साथ–साथ फसल उत्पादन के अन्य लाभ भी होते हैं। तालिका&2 में परिलक्षित होता है कि मौन पालन को उद्यानिकी फसलों के साथ अपनाने में अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है तथा फसल उपज में भी 15–20 प्रतिशत की बढ़ोतरी सरलता से प्राप्त हो सकती है।

rkfydk&2 fofHkUu m|kfudh Qlyksa dk e/kqeD[kh }kjk ijkx.k ij fuHkZjrk

Ø-la-	Qly dk uke	ijkx.k ij fuHkZjrk
1	आम	90
2	कद्दूवर्गीय फसलें	70
3	नींबूवर्गीय	30
4	मटर	50
5	बेर	90
6	अंगूर	60
7	पपीता	60
8	बैंगन	33

3 lekos'kh ekuo lalk/ku fodkl o lkekftd larqyu

किसी देश को विकसित या विकासशील बताने के कई मापदंड है जैसे आय, जीवन प्रत्याशा, शैक्षिक, खुशहाली सूचकांक तथा ग्रीन इंडेक्स आदि। उपरोक्त सूचकांकों पर भारत विकासशील देशों के वर्ग में आता है। एक उदाहरण मे भारत की अर्थव्यवस्था वर्तमान में 5वें स्थान पर है परन्तु खुशहाली सूचकांक में 137 देशों में 126 वें स्थान पर हैं यही स्थिति अन्य सूचकांको/मापदंडों की है। अतः हमें उचित कदम उठाने होंगे तथा विशेष संतुलन बैठाना होगा तथा उन देशों के आयामों को अपनाना होगा जों अर्थव्यवस्था के साथ अन्य मापदंडों में भी उच्च वर्ग में स्थान रखते है जैसे फिनलैंड, डेनमार्क, हॉलैंड आदि। यहां बागवानी फसलें दोहरी भूमिका निभा सकती है जो आय सृजन के साथ ग्रीन इंडेक्स को परोक्ष रूप से तथा अन्य मापदंडों को अपरोक्ष रूप से बेहतर करने में योगदान दे सकती है।

उपरोक्त मानव विकास सूचकांकों में कुपोषण भी भारत की बड़ी समस्या है जिसमें भी 125 देशों की सूची में भारत 111वें स्थान पर है जो सामाजिक असंतुलन का कारण भी है। गाँवों में जहाँ पोषण को नजरअंदाज करते हैं रतौंधी, बेरी–बेरी, पेलेग्रा, स्कर्वी, घेंघा, क्वाशियोर, एनीमिया, बाँझपन आदि रोग हो सकते हैं। समाज की कड़ी परिवार व एक स्वस्थ मनुष्य ही स्वस्थ देश के निर्माण व विकास में योगदान दे सकता है, तथा कुपोषण व भूखमरी तभी मिटेगी जब संतुलित भरपेट भोजन मिलेगा। पोषण सुरक्षा जिनमें विशेषतः विटामिन्स, खनिज लवण व जैव प्रतिकारक पदार्थ बागवानी फसलों में विद्यमान होते है जो हमारे शरीर को विभिन्न रोगों से बचाते हैं (तालिका–3)। पोषण के साथ ही औषधीय महत्व के रूप में इन बागवानी फसलों को प्राचीनकाल से जाना जाता है। उदाहरण रूप में च्यवनप्राश, त्रिफला (हरड़, बहेड़ा व आँवला), हर्बल चाय, ईसबगोल भूसी, दशमूलारिष्ठ क्वाथ, तुलसी अर्क आदि। इसके लिए किसान, वैज्ञानिक, सरकार सभी एकजुट होकर प्रयत्न कर 'उन्नत स्वास्थ्य' का संकल्प ले और सिद्धि हेतु प्रयत्नशील रहें।

rkfydk&3 ckxokuh Qlyk e: ik"k.k rRo o L=kr

Ø-l-	ik"kd rRo	L=kr
1	विटामिन्स –ए विटामिन्स –बी 1 विटामिन्स –बी 2 विटामिन्स –सी	आम, पपीता, पालक, गाजर बादाम, केला, सेब, मिर्च, सेम बेलपत्र, लीची, अनार, बैंगन, शलजम आँवला, अमरूद, बेर, नींबू वर्गीय फल, गोभी
2	खनिज लवण कैल्शियम फॉस्फोरस लोहा पौटेशियम आयोडीन	बादाम, लीची, अंजीर, चौलाई, सहजन अनार, आडू, पपीता, लहसुन, मटर करौंदा, खजूर, दाख, पालक अनार, केला, चौलाई, पालक, करेला, मूली जामुन, केर, भिंडी, ग्वारफली
3	प्रोटीन	काजू, सीताफल, अखरोट, मटर, सेम, चवला
4	कार्बोहाइड्रेट्स	केला, खजूर, किशमिश, बेल, आलू
5	वसा	अखरोट, एवोकैडो, बादाम
6	जल तत्व	तरबूज, खरबूजा, खीरा
7	कार्बनिक अम्ल	सेब, अंगूर, जामुन, नींबू वर्गीय फल, मिर्च
8	रेशो की मात्रा	अमरूद, पपीता, चौलाई, पालक, आँवला

4 ckxokuh vk/kkfjr fofuek.k vkj lok,:

बागवानी फसलें कई उद्योगों के लिए कच्चे माल की पूर्ति करती है जैसे कागज (केला, बांस), शहद, फार्मा उद्योग (बेल, इसबगोल, सनाय, सफेद मूसली), पशु आहार (प्रसंस्करण अपशिष्ट), पोल्ट्री आहार पूरक (मेथीदाना, जीरा, हल्दी), सौन्दर्य प्रसाधन उद्योग (ग्वारपाठा, हल्दी, केसर, जैतून, आंवला), इत्र उद्योग (गुलाब, केवड़ा, चमेली, रजनीगंधा), हर्बल उत्पाद उद्योग (गुलाब, केवड़ा, चमेली, रजनीगंधा), हर्बल उत्पाद उद्योग (सहजन, अश्वगंधा, स्टेविया, ब्राहमी, तुलसी, नोनी), खाद्य प्रसंस्करण उद्योग (टमाटर, अंगूर, आम, सेब, सीताफल, अनानास) आदि। फसल विविधिकरण में बागवानी फसलों की भागीदारी प्रमुखता से आती है जिनकी उन्नत सेवाएं आवश्यक होती है तथा विदेशी मुद्रा अर्जन निर्यात द्वारा किया जा सकता है। बागवानी फसलें जो जल्दी खराब होती है उनको लम्बे समय तक ताजा नहीं रख सकते या उनके अवशिष्ट भी विभिन्न उत्पाद व उपउत्पाद बनाने में प्रयुक्त होते है। यहां ताजी अवस्था में शीघ्र उपभोक्ता तक पहुंचाने की सेवाएं व उत्पाद निर्माण से आमदनी व रोजगार सजृन किये जा सकते हैं।

rkfydk&4 iem[k ckxokuh Qlyk e: i:;Dr fofuek.k@lok,: rFkk mRiknk dk fooj.k

Ø-l-	ckxokuh Qly dk uke	i:nRr fofuek.k@lok,:	mRikn fo'k"k
1.	आम	श्रेणीकरण व पैकेजिंग हाउस गुद्दा निष्कर्षण इकाई अपशिष्ट प्रबंधन	ताजे फल निर्यात आम पापड़, गुद्दा डिब्बाबंदी अमचूर, गुठली (मूलवृंत हेतु नर्सरी व पशु आहार)
2.	केला	फल पकाने की इकाई प्रसंस्करण इकाई अवशिष्ट प्रबंधन	उचित समय फल आपूर्ति चिप्स व अन्य कागज लुगदी
3.	संतरा	श्रेणीकरण व पायसीकरण प्रसंस्करण इकाई अवशिष्ट (निष्कर्षण)	ताजेफल उपचार रस व उत्पाद सत, तेल, टार्टरी

Ø-l-	ckxokuh Qly dk uke	iznRr fofuek.k@lok,a	mRikn fo'k"k
4.	सेब	पैकेजिंग हाउस प्रसंस्करण अपशिष्ट प्रबंधन	ताजे फल विपणन, निर्यात व भण्डारण रस, गुद्दा व उत्पाद साइड़र
5.	टमाटर	पैकेजिंग ईकाई प्रसंस्करण अपशिष्ट प्रबंधन	ताजे फल विपणन प्यूरी, कैंचप, सॉस लाइकोपिन रंजक
6.	आलू	शीत भण्डार गृह प्रसंस्करण इकाई अपशिष्ट प्रबंधन	आलू भण्डारण बीज या उपयोग चिप्स, फ्रैंच फ्राई स्टार्च

5 'kgjh fodkl esa ckxokuh

विकसित भारत 2047 में एक संकल्पित बिन्दु रखा की शहरों को ग्रोथ हब के रूप में विकसित किया जायेगा। जिसे पेरी–अर्बन क्षेत्रों के व्यवस्थित विकास जनित मॉडल के माध्यम से हासिल किया जाना है। नई कॉलोनिया, बहुमंजिला इमारतें, भूदृश्य कार्य योजना, वॉटर हार्वेटिंग संरचनाऐ आदि आयाम जोड़कर बागवानी फसलों की खेती/रोपण से उस क्षेत्र की सौन्दर्यपरकता में निखार आयेगा तथा पर्यावरण योगदान के साथ फसल की मांग पूर्ति में सामंजस्य आर्थिक दृष्टि से भूमिका निभा पायेंगे। वर्तमान में शहरों व पेरीअर्बन क्षेत्रों में गृह वाटिका, छत पर बागवानी, कंटेनर गार्डनिंग, संरक्षित खेती (पॉली आउस, हाइड्रोपॉनिक्स), वर्टीकल फार्मिंग, सामुदायिक बगीचे, इमारत व चौराहे सौर्न्दयीकरण जैसी कार्य योजनाएं मूर्त रूप से देखने को मिल रही है जिसे भविष्य में प्रोत्साहित करने की जरूरत होगी जिससे पर्यावरण संतुलन के साथ ताजी पत्तेदार (पालक, धनिया, लेट्यूस, पान मेथी, बसेला, पुदीना, लेमन घास), औषध (तुलसी, अंडूसा, पथरचट्टा, ग्वारपाठा) व अन्य बागवानी फसलें पोषण, स्वास्थ्य व जगह सुंदरता मे परोक्ष योगदान तथा अर्थव्यवस्था को सकारात्मक बल प्रदान करेगी।

6 cfu;knh <kapk fodkl esa lq/kkj

कुछ बागवानी फसलें (फल, पुष्प, सब्जियां) सामान्य स्थिति में निम्न अवधि तक भण्डारित हो सकती है वहीं रोपण फसलें (काजू, नारियल, चाय, कहवा) बिना प्रसंस्करण ढ़ांचा बनायें विकास संभव नहीं है। वर्तमान में कुछ फसलों को बेहतर तरीके से बुनियादी सुधार हो पाये है जैसे सेब, केला, आलू, मसाले, रोपण फसलों आदि परन्तु आगे पंक्ति में कई सक्षम फसलें है जिनमें बुनियादी सुविधाऐं प्रदान करने पर राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बना सकती है। विकसित भारत 2047 तक बागवानी विकास हेतु निम्न क्षेत्र है जैसे हरित गृह (ग्रीन हाउस), भण्डार गृह, पैक हाउस, परख इकाईयाँ, छंटाई–श्रेणीकरण केन्द्र, शीत श्रृंखला (कोल्ड चेन), प्राथमिक प्रसंस्करण केन्द्र, फल पकाने वाले कक्ष, लॉजिस्टिक सुविधाएं, खाद्य प्रसंस्करण ईकाईयां आदि में संरचनात्मक रूपांतरण करने से आर्थिक विकास को बल मिलेगा। संरचनात्मक विकास के बाद आपूर्ति श्रृंखलाओं के लिए कृषक उत्पादक निगरानी, सहकारी समितियों और स्टार्टअप को बढ़ावा दिया जावे तो हम निर्यात स्तर तक आसानी से पहुंच सकते है जो सही मायने में विकास का द्योतक है।

7 uokpkj vuqla/kku vkSj fodkl esa ckxokuh dk ;ksxnku

अन्य फसलों की तरह बागवानी फसलों में सतत् अनुसंधान व विकास की संभावनाएं है। वर्तमान परिपेक्ष्य में आय, पोषण, ऊर्जा सुरक्षा की बात करते है तो बागवानी फसलें सर्वोपरि है जिनके नये आयाम सामन आ रहे हैं। इन चुनौतियों की हर स्तर पर वैज्ञानिक ढंग से अनुसंधानों के माध्यम से निराकरण करना तथा विभिन्न पहलुओं के मद्देनजर नवाचारों को अनुशंषा के आधार पर अपनाने से विकास संभव है। बागवानी फसलों हेतु नवाचार अनुसंधान निम्न हो सकते हैं:

अ. मृदा उर्वरकता विकास व मृदा सुरक्षा

ब. जलवायु अनुकूलित फसलें व उनकी किस्मों का विकास

स. जैव पारिथितिकी अनुकूलित (इको सिस्टम रेजिलिएन्ट) अन्तः फसलों का समावेशन

द. संरक्षित खेती के नये आयाम

य. आय विविधता व उसमें टिकाऊपन

र. एआई आधारित स्मार्ट खेती में विकास

ल. डेटा आधारित विज्ञान (आंकलन व पूर्वानुमान हेतु) विकास

उपरोक्त नवाचारों पर निरंतर अनुसंधान व विकास परीक्षण व कार्य चल रहा है। अब इन प्रयोगों के परिणाम को खेत तक पहुंचाना है, तभी सही माने में विकास होगा।

8 Åtk lj{kk e: ckxokuh dk ;kxnku

वर्तमान में भारत का 60 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र भूजल दोहन पर आधारित हैं तथा जल उपयोग दक्षता मात्र 38–40 प्रतिशत ही है। जल स्तर इतना नीचे है कि उच्च अश्व शक्ति (ऊर्जा) की मोटरे लगाकर सिंचाई हेतु भूजल भूमि से निकाला जा रहा है। ऊर्जा स्त्रोत, जीवाश्म ईंधन, बिजली प्रत्यक्ष तथा बीज, खाद, खेती एवं प्रसंस्करण की मशीनें अप्रत्यक्ष स्त्रोत है। इन स्त्रोतों का उपयोग ग्रीन हाऊस गैस CO_2 का स्तर बढ़ाने में योगदान दे रहा है। जो वैश्विक तापमान बढ़ा रहा है अतः ऊर्जा के अन्य वैकल्पिक, गैर–पेट्रोलियम आधारित स्त्रोतों की वैश्विक आवश्यकता है। ऊर्जा की बचत ही ऊर्जा उत्पादन का दूसरी नाम है। अतः बागवानी में दक्ष मशीने/उपकरण जैसे बीज बुवाई (प्लांटर), सब्जी नर्सरी के ट्रांसप्लाटर, शुद्धता साधित्र (प्रसीजन फार्मिंग एल्लीकेटर), लेजर समतलीकरण यंत्र, सौर ऊर्जा आधारित शीत भण्डारण गृह, सौर पम्पसेट, सौर शक्ति के छिड़काव यंत्र तथा प्रसंकरण उपकरण (कुकर, शुष्कन, रोशनी, वाटर हीटर) के साथ बायोगैस, पवन ऊर्जा इलैक्ट्रिक बैटरी आधारित व हाइड्रोजन गैस जैसे विकल्प स्थाई व पर्यावरणीय मित्र है जिनका उपयोग कर ऊर्जा सुरक्षामें योगदान दिया जा रहा है। भारत की प्रति हैक्टयर कृषि शक्ति की खपत तीन किलोवॉट के आसपास है जो बागवानी फसलों विशेषतः फल, रोपण व बहुवर्षीय फसलों के अधिक अंतराल व जलवायु अनुकूलित फसलों के समावेशन से कम किया जा सकता है। जल पद चिन्ह (वॉटर फ्रूट प्रिंट) की तुलना करे तो खाद्यान फसलों से कम जल की आवश्यकता बागवानी फसलों की है। अतः अनुकूलित बागवानी फसलें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से ऊर्जा सुरक्षा व बचत में सक्षमता को दर्शाती है।

rkfydk&5 Qlyk d ty in fpUg ¼vjtu gdLVk] 2002½

क्र.सं.	फसल का नाम	एक किलोग्राम उत्पादन हेतु पानी की आवश्यकता (लीटर)
1	गेंहू	1000
2	चावल	2497
3	आम	686
4	केला	790
5	आलू	500
6	टमाटर	214

9 vkxkeh ih<h d l/kkj o ckxokuh

विधि व उत्पाद में सुधार समय–समय पर आवश्यक है जो विकास को इंगित करता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाने के लिए बागवानी अनुसंधान व विकास कार्यों में निम्न सुधार आवश्यक है:

1. खेती में फसल चक्र या अन्तः फसल, दक्ष मशीनों का उपयोग के साथ जैव उत्पाद व उप उत्पाद का मृदा सुधार, पौध संरक्षण व पर्यावरण संरक्षण करना।
2. आर्थिक विकास के साथ शाख में सुधार तथा प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा के उत्तरदायित्वों के बीच संतुलन रखना।
3. फसल उत्पाद व सेवाओं की गुणवत्ता एवं विविधताओं में सुधार जिससे अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्धात्मकता में शामिल होकर आगे विस्तार हो सके।
4. प्रक्रियाओं को सुदृढ़ करना जिससे पारदर्शिता व जबावदेही व भागीदारी सुनिश्चित हो सके ।
5. डेटा सांख्यिकी का प्रबंधन व आर्थिक प्रगति को बढ़ावा देना।

उपरोक्त घटकों पर योजनाबद्ध रणनीतियों के साथ वैज्ञानिक अनुप्रयोगों की अनुशंषा से लक्ष्य प्राप्ति संभव है।

milgkj

21वीं सदी हेतु खेती–बाड़ी में गतिशील सतत् कृषि की बहुत आवश्यकता है। वर्तमान में बागवानी फसलों का उत्पादन, खाद्यान फसलों से अधिक हो रहा है तथा इन फसलों की खपत व माँग बढ़ी है इस उत्पादन व उत्पादकता में सुधार का श्रेय वैज्ञानिकों द्वारा विकसित उन्नत किस्में व प्रौद्योगिकियाँ एवं कृषकों की मेहनत को जाता है। भारत देश ने फसल उत्पादन स्तर में सुधार, वोकल फॉर लोकल तथा मेड़ इन इण्डिया जैसें सरकारी प्रयास आर्थिक विकास को पटरी पर लाने हेतु सफल रहे व नया संकल्प सामूहिक रूप से सरकार, निवेशक, कृषक, वैज्ञानिक आदि अपने–अपने तरीकों से प्रयासरत हैं इन्हीं के परिप्रेक्ष्य में नवोन्मेषी बागवानी प्रौद्योगिकियाँ, भण्डारण गृह, पॉली हाउस, खेती, संस्करण इकाईयों की स्थापना, डिजिटल क्रांति आदि की दिशा में सराहनीय प्रयास किये जा रहे हैं। बागवानी फसलें विविधिकरण की पर्याय है जिसमें पुष्पीय सजावटी पौधे खुशहाली के प्रतीक तथा फल, सब्जियां व रोपण फसलें समृद्धि की परिचायक है। अन्य फसलों की तुलना में ये फसलें आय, पोषण, आजीविका व पर्यावरणीय सुरक्षा की गारंटी देती है। विकसित भारत के साथ खुशहाल व समृद्ध भारत को अपनाना है तो बागवानी फसलों की उन्नत खेती का समावेशन कर आगे बढ़ना होगा।

शुष्क क्षेत्रों की बागवानी में ऊन अपशिष्ट का उपयोगः सतत अर्थव्यवस्था की दिशा में एक अभिनव पहल

vuhrk eh.kk] euçhr dkSj] ,e- ds tkVo] vkj- ih- eh.kk ,oa vHk; dqekj
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में कृषि को अनेक पर्यावरणीय एवं मृदा–सम्बंधी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे अनियमित वर्षा, कम मृदा उर्वरकता तथा अत्यधिक तापमान। इन परिस्थितियों के कारण बागवानी उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि बागवानी फसलों को स्थिर नमी एवं पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इन क्षेत्रों में स्थायित्व और उत्पादकता को बढ़ाने के लिए स्थानीय संसाधनों के उपयोग पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। ऐसा ही एक संसाधन है अपशिष्ट ऊन,जो भेड़ पालन का एक उपोत्पाद है और शुष्क क्षेत्रों में आजीविका का महत्वपूर्ण साधन है। वस्त्र निर्माण के लिए अनुपयुक्त होने के बावजूद, अपशिष्ट ऊन कार्बन और पोषक तत्वों से भरपूर होता है, जो इसे मृदा संशोधन के रूप में उपयोगी बनाता है। इसके उपयोग से मृदा की संरचना में सुधार, छिद्रता में वृद्धि, नमी धारण क्षमता तथा जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है। इससे कठोर जलवायु में पौधों की वृद्धि में सहूलियत होती है और पारिस्थितिकीय स्थिरता को भी बढ़ावा मिलता है। इसके अतिरिक्त, अपशिष्ट ऊन का उपयोग कृषि इनपुट लागत को कम करता है और कम मूल्य के इस उत्पाद को एक मूल्यवान संसाधन में परिवर्तित करता है। यह प्रथा शुष्क क्षेत्रों की बागवानी को सुदृढ़ बनाती है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सहारा देती है। समग्र रूप से, अपशिष्ट ऊन का उपयोग मृदा स्वास्थ्य सुधारने, उत्पादकता बढ़ाने और पर्यावरणीय संरक्षण सुनिश्चित करने का एक व्यावहारिक एवं सतत समाधान प्रस्तुत करता है।

ifjp;

वैश्विक स्तर पर बड़ी मात्रा में जैविक अपशिष्ट एवं उपोत्पाद उत्पन्न होते हैं, जिनमें से अधिकांश को बागवानी प्रणालियों में पुनः उपयोग किया जा सकता है। इन्हीं में से एक है ऊन अपशिष्ट, जो वैश्विक ऊन उद्योग से बड़ी मात्रा में निकलता है। वस्त्र निर्माण के लिए अनुपयुक्त ऊन (प्रदूषण, तंतु की असमानता या निम्न गुणवत्ता के कारण) प्रायः या तो जला दिया जाता है या लैंडफिल में फेंक दिया जाता है, जिससे पर्यावरण प्रदूषण और संसाधन हानि होती है।

वर्तमान समय में परिपत्र अर्थव्यवस्था की अवधारणा पर जोर दिए जाने के कारण ऐसे जैविक अवशेषों को पुनः उपयोग में लाने की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है। जलवायु परिवर्तन, मृदा क्षरण और पारंपरिक बागवानी प्रथाओं से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं ने पारिस्थितिकीय रूप से टिकाऊ विकल्पों की मांग को और बढ़ा दिया है।

ऊन अपशिष्ट की विशेषता यह है कि यह प्रोटीन (जैसे कोलेजन, केराटिन एवं इलास्टिन) से भरपूर होता है। ये प्रोटीन न केवल पोषक तत्वों की आपूर्ति करते हैं बल्कि मृदा की संरचना को भी सुदृढ़ बनाते हैं। ऊन का रेशेदार स्वभाव मृदा की वायु संचारण और छिद्रता को बढ़ाता है, जिससे जड़ों का विकास और पौधों का स्वास्थ्य बेहतर होता है। इसके अतिरिक्त, ऊन अपशिष्ट पूर्णतः जैव–अपघटनीय है और समय के साथ स्वाभाविक रूप से विघटित होकर कोई हानिकारक अवशेष नहीं छोड़ता। ऊन की जलधारण क्षमता विशेष रूप से जल अभाव वाले शुष्क क्षेत्रों में उपयोगी सिद्ध होती है। इन गुणों जैसे जैव अपघटनशीलता, पोषक तत्वों की प्रचुरता और भौतिक संरचना के कारण ऊन अपशिष्ट को मल्च, जैव उर्वरक या मृदा संशोधन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इसके प्रयोग से मृदा की संरचना, नमी संरक्षण और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होता है, जो टिकाऊ बागवानी प्रथाओं को बढ़ावा देता है। इस प्रकार ऊन अपशिष्ट का पुनः उपयोग पर्यावरणीय प्रभाव को घटाने और सतत बागवानी को प्रोत्साहित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

vif'k"V Åu ds ykHk

1- ueh laj{k.k% अपशिष्ट ऊन में नाइट्रोजन एवं प्रोटीन की उपस्थिति इसे शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में जल संरक्षण हेतु एक प्रभावी विकल्प बनाती है। इसकी उच्च नमी धारण क्षमता इसे मल्चिंग सामग्री के रूप में उपयोगी बनाती है, जिससे वाष्पन ह्रास (evaporation losses) कम होता है और पौधों के लिए अनुकूल वातावरण बनता है। ऊन अपशिष्ट का उपयोग सिंचाई की आवश्यकता को कम कर सकता है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ जल की उपलब्धता फसल उत्पादकता की प्रमुख बाधा है।

2- tSfod eYp% जैविक मल्च के रूप में ऊन का उपयोग मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ाकर सूक्ष्मजीवों की सक्रियता एवं विविधता को प्रोत्साहित करता है। यह मृदा के तापमान को संतुलित रखता है और पौधों की जड़ों को तापीय तनाव

से बचाता है। ऊन अपशिष्ट मल्च का प्रयोग मृदा की जैविक गतिविधि एवं जल उपयोग दक्षता में उल्लेखनीय सुधार करता है।

3- enk l'kkèku% मृदा में मिलाए जाने पर ऊन रेशे मृदा की छिद्रता और जल अवशोषण क्षमता बढ़ाते हैं। यह विशेषकर रेतीली एवं क्षरित मिट्टियों में उपयोगी है, जहाँ जल धारण क्षमता कम होती है। ऊन अपशिष्ट मृदा की भौतिक विशेषताओं को बेहतर बनाकर पौधों की जड़ों और लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करता है।

4- tfod moZjd% अपशिष्ट ऊन लगभग 50 प्रतिशत कार्बन, 16–17 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 3–4 प्रतिशत गंधक से भरपूर होता है, जो पोषक तत्वों की कमी वाली मिट्टियों के लिए अत्यंत उपयोगी है। इसकी जटिल रासायनिक संरचना (जैसे डाइसल्फ़ाइड बॉन्ड, लंबे पेप्टाइड शृंखलाएँ) इसे धीमी गति से अपघटित होने वाला उर्वरक बनाती है। अपशिष्ट ऊन का हाइड्रोलाइसिस कर इसकी पोषक तत्व उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। ऊन अपशिष्ट के प्रयोग से मृदा में कार्बन और नाइट्रोजन की मात्रा लगभग 30% तक बढ़ाई जा सकती है, जिससे दीर्घकालीन उर्वरक क्षमता में सुधार होता है।

'k"d {ks= esa fMªi Çlpkà ds vrxZr Åu vif'k"V dk mi;ksx

fu"d"kZ

शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में ऊन अपशिष्ट का उपयोग बागवानी और औषधीय फसलों, जैसे अश्वगंधा की टिकाऊ और लाभकारी खेती के लिए अत्यंत प्रभावी एवं व्यावहारिक समाधान है। यह मृदा की संरचना, छिद्रता, जल धारण क्षमता और सूक्ष्मजीव गतिविधि को सुधारकर पौधों के विकास और स्वास्थ्य को सशक्त बनाता है। ऊन अपशिष्ट में मौजूद कार्बन, नाइट्रोजन और अन्य पोषक तत्व धीरे–धीरे मृदा में उपलब्ध होकर जड़ और बीज उत्पादन, पौधों की सूखे सहनशीलता और जैविक उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि करते हैं। इसके अतिरिक्त, ऊन अपशिष्ट का प्रयोग रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करने, जल उपयोग दक्षता बढ़ाने और पर्यावरणीय प्रभाव घटाने में सहायक है। यह स्थानीय संसाधनों के पुनः उपयोग के माध्यम से परिपत्र अर्थव्यवस्था और सतत कृषि के सिद्धांतों को साकार करता है। ऊन अपशिष्ट न केवल मृदा और फसल स्वास्थ्य में सुधार लाता है, बल्कि यह किसानों की आय में वृद्धि, ग्रामीण आजीविका को सुदृढ़ और शुष्क क्षेत्रीय कृषि प्रणालियों को

अधिक स्थायी बनाता है। इस प्रकार, ऊन अपशिष्ट का वैज्ञानिक और व्यवस्थित उपयोग शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में सतत, उत्पादक और पर्यावरण–सुरक्षित बागवानी के लिए एक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली उपाय है। यह न केवल कृषि उत्पादन में सुधार करता है, बल्कि स्थानीय संसाधनों के कुशल प्रबंधन और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी योगदान देता है।

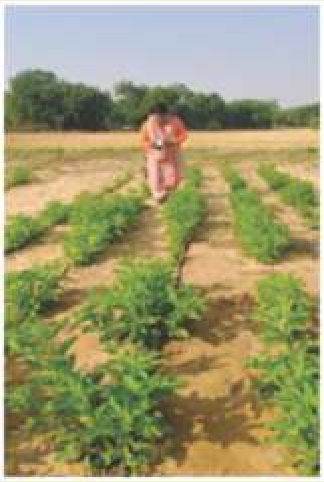
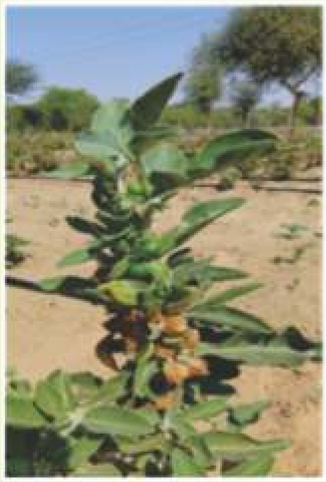

Åu vif'k"V dk mi;ksx dk vrxZr Qly çn'kZu

Åu vif'k"V dk mi;ksx dk vrxZr vÜoxa/kk dh tM+ vkSj cht mRikfnu

मरुभूमि में खेजड़ी का सामाजिक, आर्थिक एवं परिस्थितिकी महत्त्व

iou Çlg x|t|j] ,-d- oek] guqeku jke] yÔh jkBkM ,o Ikjt Hkku
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

खेजड़ी का वानस्पतिक नाम प्रोसोपिस सिनेरेरिया है। यह एशिया के गर्म शुष्क और अर्द शुष्क इलाकों में पाया जाता है जैसे कि भारत, पाकिस्तान, अफ़ग़ानिस्तान, बहरीन, ईरान, ओमान, सऊदी आरेबिया, संयुक्त अरब अमीरात और यमन में प्राकृतिक रूप से उगता है। भारतवर्ष में इसे भिन्न भिन्न नामों से जाना जाता है जैसे कि पंजाब में इसे झंड, राजस्थान में खेजड़ी, उत्तर प्रदेश में छोंकरा, तेलंगाना में जम्मी, कर्नाटक में बन्नी, तमिलनाडू में वन्नी और हरीयाणा में जांटी के नाम से जाना जाता है, संस्कृत भाषा में यह शमी के नाम से जाना जाता है। भारत के बाहर संयुक्त अरब अमीरात में इसे ग़फ़ नाम से जाना जाता है। इस वृक्ष का सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और पर्यावरण महत्व भी बहुत अधिक है। शुष्क क्षेत्रों में खेजड़ी के बहुआयामी महत्त्व को ध्यान में रखते हुए संयुक्त अरब अमीरात ने इसे राष्ट्रीय वृक्ष तथा राजस्थान व तेलंगाना में इसे राज्य वृक्ष घोषित किया है। राजस्थान में यह बीकानेर, बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर, नागौर, अजमेर, जयपुर, अलवर, सीकर, झुंझुनू, चुरू, भरतपुर, करौली और धौलपुर जिलों में अधिक संख्या में पाया जाता है। थार रेगिस्तान में खेजड़ी पारंपरिक कृषि प्रणाली का अभिन्न अंग है। जो सहचर्य में लगाई फसलों की वृद्धि तथा ऊपज को बढाता है साथ ही भूमि की उर्वरा शक्ती का उन्नयन करने में सहायक होता है। इसके अलावा प्रचंड गर्मी में सांगरी के रूप में पौष्टिक सब्जी, पशु चारे के लिए लूँग, पशु–पक्षीयों, जंगली जानवरों के लिए आश्रय प्रदान करता है। खेजड़ी के सभी भाग मानव के लिए उपयोगी है इसलिए इसे कल्पवृक्ष की संज्ञा दी है। राजस्थान के रेगिस्थान में यह किसानों, पशुओं व अन्य सभी जीव जंतुओ के लिए प्रतिकूल परिस्थितिओं में संभल प्रदान करता है इसीलिए इसे "राजस्थान की जीवन रेखा" भी कहते है।

खेजड़ी की कोमल फली को स्थानीय भाषा में 'सांगरी' कहते हैं जो कि प्रोटीन, आहार फाइबर, खनिज तत्व एवं जैव सक्रिय यौगिकों का समृद्ध श्रोत होता है। खेजड़ी की परिपक्कव व पकी फली में भी पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं जिसे खोखा तथा मारवाड़ी मेवा भी कहते हैं। खेजड़ी वृक्ष का पौराणिक कथाओं, प्राचीन धार्मिक ग्रंथों, इतिहास और लोक कथाओं में विशेष उल्लेख मिलता है। वर्तमान परिपेक्ष में भी मरुभूमि में खेजड़ी वृक्ष का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं पारिस्थितिकी की दृष्टि से अतिमहत्वपूर्ण स्थान है। इसलिए इस लेख में उपरोक्त वर्णित सभी पहलुओं को सम्मिलित किया है।

[kstMh dk èkkfeZd ,oa lkaL—frd egÙo

1 राजस्थान में गोगाजी एक लोकप्रिय आराध्य लोकदेवता हैं उनका मंदिर अथवा थान हमेशा खेजड़ी के पेड़ के नीचे पाए जाते हैं।

2 रामायण में उल्लेख है कि खेजड़ी वृक्ष भगवान श्री राम जी को अति प्रिय था और लंका जाने से पहले उन्होंने इसकी पूजा कर के विजयी होने का आशीर्वाद प्राप्त किया था। महाभारत में उल्लेख है कि पांडवों ने एक वर्ष के अज्ञातवास के दौरान उनके शस्त्रों को खेजड़ी वृक्ष में छुपाया था। खेजड़ी का वृक्ष शक्ति, सहनशक्ति और विपरीत परिस्थितियों पर विजय का प्रतीक माना जाता है। संस्कृत भाषा और उपनिषदों में विधि विधान से इसकी पूजा का उल्लेख है इसकी पूजा करते समय निम्नलिखित श्लोक का वाचन किया जाता है–

"शमी शम्यते पापम शमी शत्रुविनाशिनी ।
अर्जुनस्य धनुर्धारी रामस्य प्रियदर्शिनी ।
करिश्य्माणायात्रा यथाकालम सुखम मया।
तत्रिनिर्विर्घ्नकर्त्रित्व भव श्रीरामपुजिता।

3 खेजड़ी के वृक्ष का धार्मिक द्रष्टिकोण से महत्व होने के कारण इसे दशहरा पर्व पर पूजा जाता है। कर्नाटक में दशहरे के दौरान एक बहुत लोकप्रिय अभिवादन 'बन्नी कोडतिने, बंगारा हगाली' जिसका अर्थ है "मैं तुम्हें बन्नी पेड़ की पत्तियां देता हूं, और वे तुम्हारे लिए सोना लाएंगी"।

4 जन्माष्टमी के शुभ अवसर पर लोग पूजा और अनुष्ठान के लिए खेजड़ी के पत्तों का उपयोग करते हैं।

5 खेजड़ी के फूलों की पंखुडियां भगवन शिव एवं दुर्गा माता को अर्पण किए जाते हैं।

6 खेजड़ी की लकड़ियों का प्रयोग हवन की सामग्री बनाने और यज्ञ करने में प्रयोग किया जाता है।

7 खेजड़ी पेड़ में भगवन शिव का वास माना जाता है इस वजह से ग्रामीण क्षेत्रों के लोग खेजड़ी की पूजा करते है।

8 राजस्थान में हर मंदिर का अपना ओरण और गोचर होता है जो आस पास के सभी लोगों की धार्मिक आस्था में एक जगह रखता है और ज्यादातर इन ओरण और गोचर में खेजड़ी के वृक्ष होते है।

9 खेजड़ी के सबसे प्राचीन पेड़ों में से एक मदुरै के मीनाक्षी मंदिर में देखा जा सकता है। दक्षिण भारत में प्रत्येक हिंदू योद्धा युद्ध में जाने से पहले बन्नी/खेजड़ी के पेड़ की पूजा करता था।

10 खेजड़ी बिश्नोई समुदाय के लिए पवित्र पेड़ो में से एक है, बिश्नोई समुदाय का इस पेड़ से गहरा सम्बन्ध है क्यूंकि यह समुदाय गुरु जम्भेश्वर भगवान द्वारा दिखाए गए मार्ग का अनुसरण करते हुए पर्यावरण और जानवरों को अधिक महत्व देते है।

11 खेजड़ी को काटना, बिश्नोई समुदाय के सिद्धांतों के खिलाफ है अमृता देवी बिश्नोई ने सन 1730 में खेजडली गाँव में जोधपुर के महाराजा अभय सिंह के फरमान के विरुद्ध खेजड़ी के वृक्षों को बचाने के लिए अपनी दो पुत्रियों के साथ प्राण न्योछावर किए थे उसने घोषणा की कि "सिर साटे, रूंख रहे, तो भी सस्तो जांण" यानी "यदि किसी व्यक्ति की जान की कीमत पर भी एक पेड़ बचाया जाता है, तो वह सही है। इससे प्रेरित होकर बिश्नोई समुदाय के 363 लोगों ने खेजड़ी को काटने से बचाने के लिए अपनी जान दी थी इस घटना को याद करने के लिए प्रतिवर्ष सितम्बर माह में खेजडली गाँव में मेला लगता है मेले में बिश्नोई समुदाय के द्वारा खेजड़ी तथा पर्यावरण को बचाने के लिए प्रण लिया जाता है।

[kstMh dk vkfFkd egÙo

1. खेजड़ी वृक्ष प्रचंड गर्मी के मौसम में सांगरी प्रदान करता है जो कि राजस्थान की एक प्रमुख सब्जी में से एक है इसका उपयोग अचार बनाने के लिए भी किया जाता है इसके अलावा यह प्रसिद्द पारंपरिक सब्जी पंचकूटा का भी एक प्रमुख घटक है। सूखी सांगरी का बाज़ार में 1000 से 1500 रूपया प्रति किलो मिलता है ।

QkVks rktk gjh lkaxjh

QkVks [kstMh dh yqax

2 पशुधन के लिए पौष्टिक लूँग या पत्तियों का चारा प्रदान करता है खेजड़ी की पत्तियां पशुधन के लिए बहुत फ़ायदेमंद होती हैं इनमें 14–18 प्रतिशत प्रोटीन, 15–20 प्रतिशत रेशा, और 8 प्रतिशत खनिज तत्व पाए जाते हैं लूँग का चारा भेड़, बकरी, गाय इत्यादि में दूध की मात्रा बढाता है। लूँग का बाज़ार भाव 10–15 रुपया/किलोग्राम मिलता है।

3 खेजड़ी की लकड़ी बहुत टिकाऊ होती है इसका उपयोग कृषि में काम आने वाले औजार के हत्थे बनाने, घर और ऑफिस में फर्नीचर बनाने में काम में लिया जाता है।

4 इसकी लकड़ी का प्रयोग कोयले बनाने में भी प्रयोग होता है। जो ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है।

5 मृदा की उर्वरता बढाता है नत्रजन स्थरीकरण करता है खेजड़ी आधारित फसल प्रणाली में वार्षिक फसलों की वृद्धि तथा उपज को बढाता है।

6 खेजड़ी की लकड़ी से हेंडीक्राफ्ट और खिलौने भी बनाये जाते है जो प्लास्टिक वाले खिलौनों की तुलना में अधिक टिकाऊ होते हैं।

7 खेजड़ी की पत्तियां पशुधन के लिए बहुत फ़ायदेमंद होती हैं. इनमें 14–18 प्रतिशत प्रोटीन, 15–20 प्रतिशत रेशा, और 8 प्रतिशत खनिज तत्व पाए जाते हैं।

[kstMh dk vkS"kèkh; egRo

1 प्राचीन काल से ही खेजड़ी विभिन्न आयुर्वेदिक और पारम्परिक दवाइयों का हिस्सा रही है इसमें अनेक औषधीय गुण मौजूद है जो इसे बहुत सी बीमारियों में उपयोगी बनाते है।

2 खेजड़ी की छाल कड़वी, कैसेली और कीटाणुनाशक होती है इसे बुखार, त्वचा रोग, प्रमेह, उच्च रक्तचाप, कृमि और वात–पित्त के प्रकोप से होने वाले रोगों में प्रयोग किया जाता है।

3 दाद–खाज, एक्जीमा के उपचार के लिए खेजड़ी की पत्तियों को गो मूत्र अथवा घी में पीस कर प्रभावित

स्थानों पर बाह्य रूप से लेप किया जाता है।

4 मवाद वाला फोड़ा के उपचार हेतु खेजड़ी की छाल का चूर्ण अथवा पेस्ट प्रभावित स्थान पर लगाने से लाभ होता है।

5 प्रमेह रोग में खेजड़ी की कोपल को पांच ग्राम की मात्रा में चबा कर खाने के बाद गाय का दूध पीने से लाभ होता है।

6 गर्भवती महिलाओं में गर्भपात रोकने के लिए खेजड़ी फूलों और मिश्री का मिश्रण का सेवन किया जाता है।

7 खेजड़ी के कोमल पत्तों का पेस्ट बनाकर बराबर मात्रा में मिश्री मिलाकर इसका नियमत रूप से सेवन करने से एनिमीया का रोग ठीक हो जाता है।

8 इसकी छाल के अर्क का प्रयोग ग्रामीण क्षेत्रों में बिच्छु और सांप के काटने के उपचार के लिए उपयोग किया जाता है।

9 सांगरी का सेवन खून में अवांछित कोलेस्ट्रॉल को कम करता है तथा वांछित कोलेस्ट्रॉल को बढाता है।

[kstMh dk ikfjfLFkfrdh egRo

lw[kk dks jksdus esa ennxkj: खेजड़ी अत्यंत सुखा प्रतिरोधी है, जो इसे शुष्क क्षेत्रो में पारिस्थितिक रूप से एक महतवपूर्ण प्रजाति बनता है। यह रेगिस्थानिकरण को रोकने और रेत के टीलों को स्थिर करने में मदद करता है।

enk moZjrk% यह पेड़ मृदा में नाइट्रोजन व आर्गेनिक कार्बन की मात्रा बढ़ा देता है खेजड़ी के वृक्ष की जडो में राइजोबियम बैक्टीरिया पाए जाते है जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थरीकरण करके नाइट्रेट में परिवर्तित कर के पौधों की वृधि में मदद करते हैं जिससे फसलों को बहुत फ़ायदा होता है।

enk vijnu% मृदा में खेजड़ी की जडें गहरी तथा अधिक क्षेत्र में फ़ैली होने के कारण मृदा को जकड़कर रखती हैं इसी वजह से उपजाऊ मृदा आंधी तूफ़ान और बाढ़ से बच जाती है और मृदा अपरदन को रोकने में बहुत मदद करती है।

oU; tho vkJ;% खेजड़ी थार रेगिस्तान में प्रचंड गर्मी तथा अत्यंत शुष्क वातावरण में पक्षीयों, पशुओं तथा वन्यजीवन को आश्रय प्रदान करता है।

[kstMh ds o{kks dk [krjk

यद्दपि खेजड़ी का वृक्ष रेगिस्तान की जीवन रेखा है और बहुउपयोगी वृक्ष है जो भोजन, चारा, लकड़ी, आश्रय और दवा प्रदान करता है। किसान के लिए आय एक वैकल्पिक स्रोत भी है। लेकिन फिर भी खेजड़ी वृक्ष की बड़े पैमाने पर कटाई हो रही है जिसके अनेक कारण है।

'kgjhdj.k% शहरों व उद्योगों का विस्तार होने से रेगिस्तान की जैव विविधता प्रभावित हुई है जिससे रेगिस्तान के भूमि उपयोग पैटर्न में बदलाव आया है। स्थानीय वनस्पति की तेज़ी से कटाई हो रही है और खेजड़ी की जगह नीम, गुलमोहर, करंज, पीपल, शीशम इत्यादि का रोपण हो रहा है।

0;kolkf;d [ksrh% रेगिस्तान में नहरी सिंचाई का विस्तार होने से खजूर, अनार, मूंगफली तथा बीजीय मसालों की खेती का क्षेत्र तेज़ी से बढ़ रहा है इसके लिए रेगिस्तानी धोरों को समतल किया जा रहा है और खेजरी के वृक्षों की अंधाधुन्द कटाई हो रही है ।

vkèkkjHkwr<kpk fodkl% थार रेगिस्तान में रेल नेटवर्क, सड़क एवं एक्सप्रेसवेज का विस्तार होने से खेजड़ी के साथ अन्य स्थानीय वृक्षों की बड़े पैमाने पर कटाई की है।

lkSj ÅtkZ ikdZ% अक्षय ऊर्जा उत्पादन हेतु राजस्थान के बीकानेर, बाडमेर, जैसलमेर और जोधपुर जिलों में हजारों हेक्टेयर क्षेत्र में सौर ऊर्जा पार्कों का निर्माण किया है इसके कारण खेजड़ी वृक्षों के साथ अन्य वनस्पति को भी पूर्णतः नष्ट कर दिया है ।

dhVksa o QQwn dk çdksi% दीमक एवं तना छेदक कीट तथा फुजेरियम, अल्टरनेरिया व गनोडर्मा फफूंद पूर्ण विकसित खेजड़ी वृक्ष को सुखा देती हैं ।

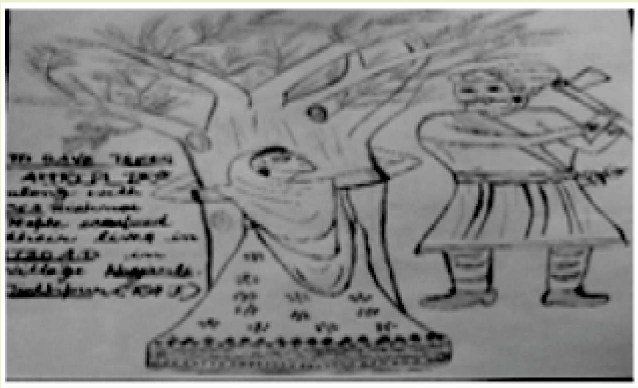

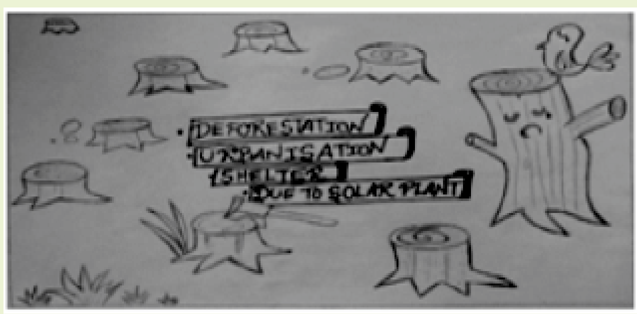

QksVks% [kstMyh dh ?kVuk dk fp=.k
[kstMh dh lq[;k de gkus dk dkj.k

कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते आयाम

ed'k dekj cjokyj] je'k dekj ,o txu Çlg xkjk
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

देश की आधी से अधिक आबादि गाँवों में रहती है जिसकी आजीविका का प्रमुख साधन कृषि एवं पशुपालन है तथा वो कृषि क्षेत्र की नवीनतम तकनीको और महत्वपूर्ण कृषि सहायता सेवाओं से अनभिग्ग हैं। ये तकनीके तथा सेवाये कृषि मे अधीकतम लाभ प्राप्त करने के लिये अति आवश्यक हैं। देश की उन्नति एवं खुशहाली का रास्ता गाँवों से होकर जाता है। यदि भारत को खुशहाल बनाना है, तो गाँवों को भी विकसित करना होगा। आज सरकार ग्रामीण विकास, कृषि एवं भूमिहीन किसानों के कल्याण पर ज्यादा जोर दे रही है। इसलिये यह क्षेत्र बेहतरी की दिशा में परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। प्रौद्योगिकी और पारदर्शिता वर्तमान सरकार की पहचान बन गए हैं। सरकार ने अगले पाँच वर्षों में किसानों की आमदनी दोगुनी करने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य रखा है। इसके अंतर्गत सरकार ने कृषि क्षेत्र की नवीनतम तकनीको तथा महत्वपूर्ण कृषि सहायता सेवाओं को अंतिम व्यक्ति तक प्रभावी हस्तांतरण करने के लिये सूचना प्रौद्योगिकी/ ई–तकनीको के उपयोग पर बहुत जोर दे रही है। और ये विस्तार और सलाहकार सेवाएं छोटे–छोटे किसानों की खुशहाली के लिए बहुत ही प्रासंगिक हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में हमारे पास दुनियाभर में 4 जी मोबाइल नेटवर्क का भी बहुत महत्व है। यद्यपि कृषि और मोबाइल टेक्नोलॉजी का ऊपरी तौर पर कोई जुड़ाव नहीं दिखता है लेकिन कृषि मे इसका बढ़ता हुआ उपयोग यह प्रमाणित करता है कि मोबाइल और क्लाउड आधारित तकनीको का उपयोग करना न केवल इन स्थिर चुनौतियों का बहुत कम समय मे समाधान करता है बल्कि बड़े पैमाने पर कृषि आधारित उधमियो और छोटे–छोटे किसानो के लिए वित्तीय मूल्य सम्वर्धन भी करता है। इस तरह की मोबाइल प्रौद्योगिकी और पोर्टेबल वायरलेस डिवाइसों की शुरूआत ने कृषि श्रृंखलाओं के अंदर उपयोग किए जाने वाली परिवर्तनात्माक सेवाओं और अनुप्रयोगों के निर्माण को प्रेरित किया है। आज के दौर में मोबाइल एप ने भी उन्नत कृषि तकनीकों की मूल्य श्रृंखला में अपना नाम सबसे ऊपर दर्ज करवा लिया है। कृषि मोबाइल प्रौद्योगिकी में बाजार की जानकारी शामिल होती है जैसे व्यापारिक सुविधाएं, मौसम संबंधी जानकारी, उत्पादन तकनीक, फसल क्याधि सबंधि जानकारी, फसलो के बजार भाव कि जानकारी, और वित्तीय सेवाओं जैसे भुगतान, ऋण और बीमा आदि जो किसानो को कृषि से जुड़े लाभ देने में सहायक होती है। क्लाउड कंप्यूटिंग, आईटी सिस्टम, ऑनलाइन शिक्षा और मोबाइल फोन के प्रसार की मदद से गरीब से गरीब किसानों तक कृषि संबंधी जानकारी पहुंचाना बहुत हि आसान हो गया है। ऐसे संपर्क और सूचना प्रवाह का एक लाभ यह है कि यह किसानों को बेहतर भूमि प्रबंधन के बारे मे निर्णय लेने में मदद करता है। ये सभी कृषि मोबाइल ऐप किसानो के लिए क्षेत्रीय भाषाओ में बनाये गये हैं, जो कि निरक्षरता मिटाने और जानकारीयो को सबसे आसान तरीके से प्रासारित करने के लिए ड्राफ़्ट किए जाते हैं।

आज के समय मे भारतीय किसानों के सामने सबसे गम्भीर समस्या अपने उत्पाद का सही मूल्य न मिलना है। कृषि बाजार मे बिचौलियों और दलालों के कारण किसानों को अपने उत्पाद बहुत कम दामों पर ही बेचने पड़ते हैं क्योंकि कई कृषि उत्पाद जैसे फल, फूल, सब्जियाँ, दूध और दुग्ध पदार्थ बहुत जल्दी खराब हो जाते हैं। इन्हें लम्बे समय तक संग्रह करके नहीं रखा जा सकता है तथा ना ही किसानों के पास इन्हें संग्रह करने की सुविधा उपलब्ध होती है। यद्यपि किसानों को इन बिचौलियों और आढ़तियों की अवसरवादीता से बचाने के बारें में भी समय–समय पर किसानों को उचित परामर्श सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। खेती और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने व किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य दिलाने की दिशा में सरकार ने हाल ही में कई महत्त्वपूर्ण योजनाओं, कार्यक्रमों व प्रौद्योगिकियों जैसे प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, आई.सी.टी. तकनीक, राष्ट्रीय कृषि बाजार, ई–खेती, ई–पशुहाट व किसान मोबाइल एप, फसल बीमा पोर्टल आदि की शुरुआत की है।

lpuk ,o lpkj vkèkkfjr rduhdh

सूचना एवं संचार तकनीकों (आई.सी.टी.) के महत्त्व

को समझते हुए किसानों तक नवीनतम कृषि सम्बन्धी वैज्ञानिक जानकारियों के प्रसार हेतु पहल की गई हैं। जैसे कि के.वी.के. की जानकारी के लिये वेब–आधारित 'के.वी.के. पोर्टल, भाकृअनुप के संस्थानों के बारे में जानकारियाँ उपलब्ध करवाने के लिये आई.सी.ए.आर. पोर्टल और कृषि शिक्षा से सम्बन्धित सूचनाओ के लिये कृषि यूनिवर्सिटी पोर्टल बनाया गया है। इसके अलावा के.वी.के. मोबाइल एप भी किसानों को तुरंत व सुलभ सूचनाएँ उपलब्ध करवाने के लिये बनाया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से सम्बंधित लगभग सभि संस्थानो ने विभिन्न कृषि एवम पशुपालन तकनिको को किसानो के लिये सुगम बनाने के लिये 100 से अधिक मोबाइल एप्लिकेशन बनाई है।

fdlku iksVZy

भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा किसान पोर्टल नाम से एक वेबसाइट विकसित की गई है। देश का कोई भी किसान इस पोर्टल तक अपनी पहुँच स्थापित कर बीजों, उर्वरकों, कीटनाशकों, फार्म मशीनरी, मौसम, खेत उत्पादों के बाजार मूल्य, विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रम के पैकेज, भंडारण, बीमा, ऋण एवं न्यूनतम समर्थन मूल्य की जानकारी स्थानीय भाषा में हासिल कर सकता है। यह सुविधा देश के सभी राज्यों में ब्लॉक–स्तर तक उपलब्ध है। कृषि आदानों जैसे खाद, बीज, उर्वरक व कृषि यंत्रों के डीलर्स की जानकारी ब्लॉक–स्तर पर प्रदान की जाती है। किसान पोर्टलपर कुछ अन्य सुविधाये भि है जैसे कि:

fdlku lfoèkk ekckby ,i– यह एप संवेदनशील पहलुओ जैसे जलवायु, पौध संरक्षण, खाद, बीज व उर्वरकों के डीलरों, कृषि परामर्श और मंडी मूल्य आदि के बारे मे किसनों को रियल टाइम मे सूचना प्रदान करता है।

iwlk —f"k ekckby ,i– इस एप के माध्यम से भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान द्वारा विकसित प्रौद्योगिकी और तकनीक के बारे में किसान सूचना प्राप्त कर सकते हैं। इसके तहत नवीनतम व विकसित तकनीक को किसानों तक पहुँचाने के दिया गया है जिससे किसान नई तकनीकी को अपनाकर अधिक लाभ कमा सकें और अपना जीवन खुशहाल बना सकें।

,e fdlku iksVZy& एम किसान पोर्टल के माध्यम से कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा लाखों किसानों को परामर्श दिया जा रहा है। भारतीय मौसम विज्ञान विभाग द्वारा 100 कृषि विज्ञान केन्द्रों पर स्वचालित मौसम केन्द्र जोड़े गये हैं।

Qly chek iksVZy– खेत में संचालित कटाई उपरान्त प्रयोग की सूचना को डिजिटल कराने के लिये सी.सी.ई. कृषि मोबाइल एप विकसित किया गया है। जी.पी.एस. के माध्यम से यह एप खेत का स्थान स्वतः ही ग्रहण कर लेता है। एप के माध्यम से लिये गये फोटोग्राफ एवं डाटा को वेब सर्वर तुरन्त स्थानान्तरित करता है। यह फसल खराब होने पर दावा निपटान समय को कम कर पारदर्शिता को बढ़ाता

है। किसानों, बीमा कम्पनियों एवं बैंकों सहित सभी स्टैक होल्डर के लिये एक ही पोर्टल है। इसमें दोनों बीमा योजनाओं जैसे पी.एम.एफ.बी.वाई. और डब्ल्यू.बी.सी.आई. एस. शामिल है। मोबाइल एप के माध्यम से और वेब पर प्रीमियम की अन्तिम तारीख एवं किसानों को उनकी फसल एवं स्थान के लिये कम्पनी सम्पर्कों की सूचना प्रदान करता है। बीमा प्रीमियम की गणना एवं अधिसूचित डाटाबेस का सृजन करता है। ऋण बीमा हेतु किसानों के आवेदन और बैंकों के साथ इनका संयोजन करता है।

Ã&[krh

आज ग्रामीणों व किसानों के पास सूचनाएँ और नई–नई जानकारियाँ प्राप्त करने के कई माध्यम हैं। परन्तु ग्रामीण विकास व कृषि से जुड़ी किसी भी समस्या का समाधान करने के लिये इंटरनेट सबसे प्रभावी, सरल व आसान माध्यम है। किसान, पशुपालक व अन्य पेशे में लगे

ग्रामीण भाई–बहन जब चाहे घर बैठे ही कृषि, पशुपालन या अन्य व्यवसायों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। आज सुदूर गाँव में बैठा किसान इंटरनेट के माध्यम से पलक झपकते ही कृषि सम्बन्धी सारी जानकारियाँ हासिल कर रहा है। कृषि विज्ञान सम्बन्धी नवीनतम व अत्याधुनिक जानकारियों के प्रचार–प्रसार में इंटरनेट महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इंटरनेट किसानों, वैज्ञानिकों और सरकार के मध्य सम्पर्क सेतु का कार्य करता है। इसके माध्यम से सरकारी योजनाओं और कृषि अनुसन्धान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ सीधे तौर पर किसानों तक पहुँचती हैं। ग्रामीणों के कल्याण और उनकी प्रगति के लिये इंटरनेट सेवा को ग्रामीण क्षेत्रों में और अधिक दुरुस्त करने की जरूरत है जिससे ग्रामीण भारत विकास व खुशहाली के रास्ते पर निरन्तर आगे बढ़ता रहे।

jk"Vªh; —f"k ckt kj

पहले किसान के पास फसल तैयार होने के बाद अपने नजदीक मे बाजार उपलब्धता नहीं होती थी जिससे वह अपने कृषि उत्पाद को औने–पौने दाम पर बिचौलियों और दलालों बेचने पर मजबूर हो जाता था। किसानों को उनकी उपज का अधिकतम लाभ देने और बड़ा बाजार उपलब्ध कराने हेतु पूरे देश में कृषि उत्पादों की ऑनलाइन बिक्री को प्रोत्साहन देने के लिये राष्ट्रीय कृषि बाजार की शुरुआत की गई है। इससे किसान अपने निकट की किसी भी मंडी में अपने उत्पाद को सूचीबद्ध कराकर उचित मूल्य पर बेच सकते है। इसके तहत 1 जुलाई, 2015 को पूरे देश में एक कॉमन ई–प्लेटफॉर्म के माध्यम से 585 थोक मंडियों को जोड़ने की पहल की गई है। अब तक 18 राज्यों की 444 मंडियों को ई–नाम के साथ एकीकृत किया गया है, जो ओन–लाईन कृषि जिंसो का व्यापार कर रही है। यह पोर्टल हिंदी और अंग्रेजी सहित अधिकांश क्षेत्रीय भाषाओं में भी उपलब्ध हैं। राष्ट्रीय कृषि मंडी 'ई–नाम' पोर्टल की स्थापना किसानों के लिये एक क्रान्तिकारी कदम है। 'ई–नाम' पोर्टल के लिये एक टोल फ्री नम्बर 1800–2700–224 के साथ हेल्प डेस्क भी स्थापित किया गया है। 'ई–नाम' पोर्टल कि अपनि एक मोबाइल एप भी है, जो हिंदी और अंग्रेजी सहित अधिकांश क्षेत्रीय भाषाओं में भी उपलब्ध हैं। आप गूगल प्ले स्टोर पर जा कर ई–नाम मोबाइल एप डाउनलोड कर सकते हैं।

Ã&i'kgkV ikVZy

राष्ट्रीय बोवाइन उत्पादकता मिशन के अन्तर्गत देश में पहली बार राष्ट्रीय दुग्ध दिवस 26 नवम्बर, 2016 के अवसर पर ई–पशुहाट पोर्टल की शुरुआत की गई है। इस पोर्टल के मुख्य उद्देश्य जैसे कि पशुधन जर्मप्लाज्म और अतिरिक्त संबंधित सेवाओं के लिए ई–व्यापार बाजार पोर्टल, केन्द्र, राज्य, सहकारी और निजी एजेंसियों प्रजनक के साथ किसानों को जोड़ना, जर्मप्लाज्म की उपलब्धता पर समय आधारित वास्तविक प्रामाणिक जानकारी देना तथा केन्द्र और राज्य सरकारों के लिए जानकारी का केंद्रीकृत भंडार उप्लब्ध कराना है। इस पोर्टल के द्वारा किसानों को देशी नस्लों की नस्लवार सूचना प्राप्त होगी। इससे किसान एवं प्रजनक देशी नस्ल की गाय एवं भैंसों को खरीद एवं बेच सकेंगे। देश में उपलब्ध जर्मप्लाज्म की सारी सूचना पोर्टल पर देखी जा सकती है जिससे किसान भाई इसका तुरन्त लाभ उठा सकें। इस पोर्टल के द्वारा उच्च देशी नस्लों के संरक्षण एवं संवर्धन को नई दिशा मिलेगी। निकट भविष्य में पशुओं की बेहतर नस्लों को बढ़ाने में मदद मिलेगी। यह बोवाइन प्रजनकों, विक्रेताओं और खरीददारों के लिये 'वन–स्टॉप पोर्टल' है।

fdlku d,y lVj

फसल उत्पादन से सम्बन्धित किसी भी समस्या के समाधान के लिये किसान कॉल सेंटर की सुविधा सभी राज्यों में उपलब्ध है। इस सेवा के तहत किसान अपनी समस्या दर्ज करा सकते हैं जिनका समाधान 24 घंटों के अन्दर कृषि विशेषज्ञों द्वारा उपलब्ध करा दिया जाता है। किसान कृषि विश्वविद्यालय और कृषि अनुसन्धान केन्द्रों के विशेषज्ञों के माध्यम से अपने प्रश्नों के उत्तर पाने के लिये नजदीकी किसान कॉल सेंटर पर टोल फ्री नं. 1800–180–1551 से साल के 365 दिन प्रातः 6 बजे से रात्रि 10 बजे के बीच सम्पर्क कर सकते हैं।

fdlku ,l-,e-,l- ikVy

भारत सरकार ने किसानों के लिये एक एस.एम.एस. पोर्टल की शुरुआत की है। किसान एस.एम.एस. पोर्टल एक अखिल भारतीय सेवा प्रणाली है जो इसका उपयोग करने वाले विभाग/संगठन के लिये पूरी तरह निःशुल्क है तथा कृषि सम्बन्धी सभी कार्यों के लिये है। इस सुविधा के माध्यम से किसान कृषि के सम्बन्ध में अपनी आवश्यकताओं, स्थान और अपनी भाषा के अनुरूप सलाह और सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। कृषि कार्यों/पसन्द की फसलों के बारे में सन्देश प्राप्त करने के अनुरोध के बाद किसान एस.एम.एस. पोर्टल

प्रणाली में किसानों को उनके मोबाइल पर एस.एम.एस. सन्देश मिलते रहते हैं जिनमें सूचना या सेवा की जानकारी या विशेषज्ञों, वैज्ञानिकों और अधिकारियों की आवश्यक सलाह दी जाती है। ये सन्देश उन किसानों को भेजे जाते हैं जिनके आवास सम्बद्ध अधिकारियों/वैज्ञानिकों/विशेषज्ञों के अधिकार क्षेत्र में पड़ते हैं। प्रारम्भ में मौसम अनुमान, मौसम चेतावनी, पौधों और पशुओं में बीमारी शुरू होने या कीड़े लगने के सम्बन्ध में सलाह, स्थानीय आवश्यकताओं आदि के अनुरूप फसलों के लिये उचित प्रौद्योगिकी सम्बन्धी परामर्श, नई या अत्यधिक उपयुक्त फसल की किस्म/पशु की नस्ल के सम्बन्ध में परामर्श, बाजार सूचना और मृदा परीक्षण के परिणाम आदि से सम्बन्धित सन्देश भेजे जाते हैं। अपना पंजीकरण कराते समय किसान जिस भाषा में एस.एम.एस. सन्देश चाहते हैं, उसका उल्लेख कर सकते हैं। यदि किसान के मोबाइल में उस भाषा का उत्तर प्राप्त करने की सुविधा नहीं है तो रोमन लिपि में उस भाषा में सन्देश भेजे जा सकते हैं।

LekV Qku

आजकल स्मार्टफोन ने ई–कृषि/साईबर खेती मे इसका प्रचलन दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। यह हमारी जिन्दगी का एक अहम हिस्सा बन गया है। स्मार्ट फोन ने कृषि, पशुपालन के साथ–साथ हमारे रोजमर्रा के अधिकांश कामों को बहुत हि आसान बना दिया है। यह लगभग हर समय हमारे साथ रहता है। इसकी सहायता से सुदूर ग्रामीण ईलाको के लोग भी अपने अनेक काम आसानी से घर से बाहर निकले बिना हि निपटाने लगे हैं। यह बातचीत के अलावा मीटिंग करना, घर बैठे अपने विभिन्न प्रकार के बिलों का भुगतान करना व खेती–बाड़ी की जानकारी वेबसाइटों एवम मोबाइल एप पर निकाल सकते हैं। स्मार्ट फोन पर कृषि सम्बन्धी आधुनिक जानकारी विभिन्न एप के माध्यम से उपलब्ध है। स्मार्ट फोन एवम कम्प्यूटर तकनीकी मिलकर कृषि में अनेको प्रकार कि समस्याओ का सहि पता लगा कर उसका सहि समधान बहुत हि कम समय मे कर सकते है, जिससे जल, ऊर्जा, धन और समय की बचत होती है। यह ग्रामीणों, किसानों, मजदूरों व पशुपालकों को हर प्रकार की सुविधा उपलब्ध कराता है। स्मार्ट फोन के माध्यम से ग्रामीण भारत में डिजिटल साइबर कृषि ने एक क्रान्ति का रूप ले लिया है जो आने वाले समय में ग्रामीण भारत की दिशा व दशा दोनो ही बदल सकती है। अतः साइबर कृषि बहुत ही उपयोगी तकनीक है। इससे ग्रामीण जीवन बहुत ही आसान एवं व्यवस्थित बना सकते हैं। अतः ग्रामीणों को इन तकनीकों का लाभ लेकर अपनी जीवनचर्या को और बेहतर बनाना चाहिए।

साथ ही, इस लेख में उल्लिखित विभिन्न सूचना प्रौद्योगिकी एवं ई–तकनीकी पहलें जैसे किसान पोर्टल, किसान सुविधा,

पूसा कृषि, फसल बीमा पोर्टल, ई–नाम पोर्टल, ई–पशुहाट पोर्टल, ई–खेती, एम–किसान पोर्टल तथा कृषि मंडी मोबाइल ऐप आदि को किसानों तक सुलभ बनाने में स्मार्टफोन ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्मार्टफोन के व्यापक उपयोग से इन सभी डिजिटल सेवाओं तक किसानों की पहुँच सरल, त्वरित और प्रभावी हुई है।

अतः यह कहा जा सकता है कि इन सभी योजनाओं और पहलों की सफलता का प्रमुख आधार स्मार्टफोन है, जिसने कृषि क्षेत्र में सूचना, सेवाओं और तकनीकी नवाचारों को किसानों के हाथों तक पहुँचाने का कार्य किया है।

हिन्दी एक संगठित करने वाली शक्ति है। हिन्दी का प्रचार एक वाग्यज्ञ है।
—काकासाहब गाडगिल

हिन्दी अपने गुणों से देश की राष्ट्रभाषा है। हिन्दी पढ़ना पढ़ाना हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है।
— लालबहादुर शास्त्री

भारत के विभिन्न प्रदेशों के बीच हिन्दी प्रचार के द्वारा एकता स्थापित करने वाले सच्चे भारतबंधु हैं।
—महिर्षि अरविंद घोष

भारत में उद्यानिकी क्रांतिः सतत विकास के लिए स्वच्छ पौधा कार्यक्रम (सीपीपी)

Jfr feJk[1] ,o fodkl oek[2]

[1]भाकृअनुप–राष्ट्रीय कृषि नवाचार परियोजना, नई दिल्ली

[2]केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, इंफाल, मणिपुर

भारत उद्यानिकी उत्पादों जैसे फल सब्जियां मसाले और बागान फसलों का एक एक प्रमुख उत्पादक है, जो देश की कृषि अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। चीन के बाद भारत दुनिया में फल और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। वर्ष 2022–23 में भारत का उद्यानिकी उत्पादन 351.92 मिलियन टन रहा। भारत कई प्रमुख फसलों जैसे केले पपीता प्याज अदरक और भिंडी का सबसे बड़ा उत्पादक भी है, जो वैश्विक उद्यानिकी बाजार में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को मजबूत करता है। उद्यानिकी क्षेत्र भारत की कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जो कृषि सकल मूल्य वर्धन में लगभग 33 प्रतिशत योगदान देता है। आर्थिक योगदान के अतिरिक्त यह क्षेत्र सामाजिक

दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त रोजगार के अवसर सृजित करता है। उद्यानिकी खेती कृषि प्रणालियों में विविधता को बढ़ावा देती है तथा किसानों की आय में सुधार कर समग्र ग्रामीण विकास को समर्थन प्रदान करती है। इन योगदानों के बावजूद यह क्षेत्र महत्वपूर्ण चुनौतियां का सामना करता है। जलवायु अनिश्चितताएं जैसे सूखा, बाढ़ और तूफान, अक्सर उत्पादन को प्रभावित करते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप फसल हानि और बाजार मूल में अस्थिरता उत्पन्न होती है, इसके अतिरिक्त पानी की कमी और अपर्याप्त जल प्रबंधन उद्यानिकी फसलों के विकास में निरंतर बाधाएं उत्पन्न करती है। कृषि बाजार की सीमित जानकारी भी किसानों के उत्पादों को प्रभावी रूप से विपणन करने की क्षमता को बाधित करती है।

भारत की विविध जलवायु हालांकि विभिन्न प्रकार के फल और सब्जियां उगाने की अनुमति देती है, जो इस क्षेत्र में दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक बनने में इसकी स्थिति को मजबूत करती है । दुर्भाग्यवश कीट विशेष रूप से वे जो पौधारोपण सामग्री या बीजों के माध्यम से आते हैं इस क्षेत्र के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। विषाणु जो वनस्पतिक रूप से प्रचारित होते हैं, किसानों की चुनौतियों को बढ़ाते हैं, जिससे फसलों की उपज 50 प्रतिशत तक घट सकती है। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए भारत सरकार ने स्वच्छ पौधा कार्यक्रम शुरू किया है, जिसे प्रधानमंत्री के नेतृत्व में केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा मंजूरी दी गई थी। इस कार्यक्रम में 1765.67 करोड रुपए का निवेश किया गया, इसका उद्देश्य भारत वर्ष में फल सब्जियां की गुणवत्ता और उत्पादकता को बढ़ाना है। यह पहल गुणवत्ता वाली विषाणु मुक्त पौधारोपण सामग्री किसानों को उपलब्ध कराने पर केंद्रित है , जिससे उपज में सुधार फसल की गुणवत्ता में वृद्धि और जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन बनाए रखने की उम्मीद है। इसके प्रारंभिक चरण में स्वच्छ पौधा कार्यक्रम बादाम, सेव, एवोकाडा, बेर, खट्टे फल, अंगूर, अमरुद, लीची, आम, अनार और अखरोट इत्यादि पर ध्यान केंद्रित करेगा। इसके अलावा रोग मुक्त पौध रोपण सामग्री के प्रचार के लिए निजी नर्सरी को मान्यता देने, स्वच्छ पौधा केंद्रों का विकास करने और नियामक ढांचे को मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित करेगा। यह प्रयास भारत के उद्यानिकी क्षेत्र के समग्र सुधार और वैश्विक बाजारों में इसकी प्रतिस्पर्धता बढ़ाने में मददगार साबित होगा ।

LoPN ikèkk dk;Øe ls fofHkUu fgrèkkjdk dk feyus okys ykHk%

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम किसानो, नर्सरी मालिको, उपभोक्ताओं और निर्यातकों के लिए कई फायदे लाता है, जो अंततः भारत के उद्यानिकी क्षेत्र के विकास और स्थिति में योगदान करता है।

1 fdlkuk dk c<+kh gÃ mRikndrk dk ekè;e ls l'kä cukuk:

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य उच्च गुणवत्ता वाली विषाणु मुक्त पौधारोपण सामग्री प्रदान करके फसल की उपज को बढ़ाना है, इससे किसानों को स्वस्थ और अधिक उत्पादक फसलें उगाने में मदद मिलेगी। उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादन के साथ किसान बेहतर बाजार मूल की उम्मीद कर सकते हैं,जिससे उनकी आय के अवसरों में सुधार होगा फसल रोगों के जोखिम को कम करने के कारण यह कार्यक्रम कृषि प्रथाओं की दीर्घकालिक स्थिरता में भी योगदान करेगा, जिससे किसानों के लिए कृषि अधिक लाभकारी बनेगी।

2 ulljh vkj ulljh {k= dk fy, leFku%

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम नर्सरी मालिकों के लिए काफी लाभकारी साबित हो सकता है, क्योंकि यह प्रमाणन प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करता है, और बुनियादी ढांचा को समर्थन प्रदान करता है। जिससे नर्सरी मालिकों को स्वच्छ,

रोग मुक्त पौधारोपण सामग्री का प्रचार प्रसार करने में आसानी होगी तथा उच्च गुणवत्ता वाले पौधों की आपूर्ति मजबूत बनेगी। उन्नत सुविधा और तकनीकी विकास नर्सरी क्षेत्र के विकास और स्तर को बढ़ावा देंगे, जिससे यह क्षेत्र दीर्घकालीन रूप से फल फूल सकेगा

3 miHkkäk vuHko e: lekkj vkj x.koÙkk oky: mRiknu:

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम न केवल विषाणु मुक्त बल्कि स्वाद, रूप और पोषण युक्त फल और सब्जियां की उपलब्धता सुनिश्चित करेगा, साथ में उपभोक्ताओं को संतोष भी प्रदान करेगा। फल और सब्जियां जो, कि हानिकारक रोगों और कीटों से मुक्त होंगे वह स्वस्थ आहारों में भी योगदान प्रदान करेंगे।

4 of'od ckTkj e: Hkkjr dh fLFkfr dk etcr djuk

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम के तहत फलों और सब्जियो की गुणवत्ता में सुधार के साथ भारत की वैश्विक निर्यात बाजार में स्थिति में महत्वपूर्ण वृद्धि होगी। रोग मुक्त उच्च गुणवत्ता वाले फल, सब्जियां उगाकर भारत निर्यात के अवसरों का विस्तार कर सकता है, और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में अपनी हिस्सेदारी बढ़ा सकता है। इससे भारत की ताजा उत्पादन के प्रमुख निर्यातक के रूप में स्थिति मजबूत होगी, जो समग्र रूप में अर्थव्यवस्था के लिए लाभकारी होगा।

5 dk;Øe dk lEFku nu dfy, mUur lfoèkk,

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम देश भर में 9 उन्नत स्वच्छ संयंत्र केंद्र स्थापित करेगा, जो प्रत्येक विशिष्ट फल प्रकार के विशेषज्ञ प्राप्त करेंगे। यह केंद्र अत्याधुनिक निदान और उपचार सुविधाओं से सुसज्जित होंगे, जिसमें ऊतक संवर्धन प्रयोगशालाएं शामिल होंगी, ताकि केवल सर्वोत्तम विष्णु मुक्त पौधारोपण सामग्री का प्रचार किया जा सके। यह केंद्र प्रमुख फसलों पर ध्यान केंद्रित करेंगे जैसे, अंगूर, ठंडे क्षेत्रों के फल (सेब, बादाम, अखरोट आदि) खट्टे फल, आम, अमरूद, एवोकाडो, अनार और उष्ण कटिबंधीय फल इत्यादि यह बुनियादी ढांचा कार्यक्रम की दक्षता और पैमाने को बढ़ाएगा, जो अंततः किसानो और उपभोक्ताओं को लाभ पहुंचाएगा।

ie[k Qly	dUn
अंगूर	एन.आर.सी. पुणु
ठंडे क्षेत्रों के फल (सेब, बादाम, अखरोट, आदि	सी.आई.टी.एच श्रीनगर और मुक्तेश्वर
खट्टे फल	सी.सी.आर.आई, नागपुर और केशुबास, बीकानेर
आम / अमरूद / एवोकाडो	आई.आई.एच.आर. बेंगलुरू
आम / अमरूद / लीची	सी.आई.एस.एच., लखनऊ
अनार	एन.आर.सी. सोलापुर
उष्णकटिबंधीय / उप–उष्णकटिबंधीय फल	पूर्वी भारत

6 dkuuh vkj fu;ked ç.kkfy;k dk etcr djuk

इस कार्यक्रम के तहत एक मजबूत प्रमाणन प्रणाली स्थापित की जाएगी, जो 1966 के बीज अधिनियम के तहत यह सुनिश्चित करेगी, कि सभी पौधारोपण सामग्री कानूनी मानकों के अनुसार उत्पादित, प्रमाणित और बेचे जाएं। यह प्रणाली प्रक्रिया के दौरान पता लगाने की क्षमता और उत्तरदायित्व की गारंटी देगी, इसके अतिरिक्त बड़े पैमाने पर नर्सरी के स्वच्छ पौधारोपण सामग्री के प्रचार के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचा विकसित करने में समर्थन करेगी, जिससे गुणवत्ता वाले पौधों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित होगी ।

7 yfxd lekurk vkj lekos'ku dk c<kok nuk

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम समावेशन और स्थिरता पर जोर देता है, जिससे सभी किसानों को स्वच्छ पौधा सामग्री तक सस्ती पहुंच सुनिश्चित होगी। योजना संसाधन तक पहुंच,

प्रशिक्षण और निर्णय लेने में महिला किसानों को सक्रिय रूप से शामिल करती हैं। लैंगिक समानता को बढ़ावा देने और महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए स्वच्छ पौधा कार्यक्रम में कई महत्वपूर्ण कदम शामिल है जैसे अनिवार्य महिला कर्मचारियों की नियुक्ति, नर्सरी निर्णय निर्माण में महिलाओं और कमजोर समूह की भागीदारी, और महिला वैज्ञानिकों को छात्रवृत्तियां और प्रशिक्षण अवसर प्रदान करना। लैंगिक समानता और सामाजिक समावेशन योजना कार्यान्वयन उप परियोजना निदेशक द्वारा किया जाएगा, जिसमें संस्थागत विकास विशेषज्ञ का समर्थन होगा। नियमित प्रगति रिपोर्ट यह सुनिश्चित करेगी कि लैंगिक समानता के लक्ष्य पूरे किए जाएं और कार्यक्रम भारत के उद्यानिकी क्षेत्र में लैंगिक असमानताओं को कम करने के लिए सक्रिय रूप से काम करेगा ।

jk"Vªh; m|kfudh fe'ku dk lkFk ,dhdj.k%

स्वच्छ पौधा कार्यक्रम भारत की व्यापक उद्यानिकी विकास पहलों के साथ मेल खाता है और इसे पूरा करता है। विशेष रूप से राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन जो की मुख्य क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करता है जैसे नर्सरी अवसंरचना विकास, बागवानी का विस्तार, पुराने बागो का पुनरोद्धार और जैविक खेती को बढ़ावा देना। स्वच्छ पौधा कार्यक्रम और राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन के बीच का यह सहयोग क्षेत्र के विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण सुनिश्चित करता है जो किसानों को उत्पादकता और स्थिरता बढ़ाने के लिए व्यापक समर्थन प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त स्वच्छ पौधा कार्यक्रम राष्ट्रीय स्थिरता लक्ष्यों के साथ मेल खाता है जैसे मिशन लाइफ (पर्यावरण के लिए जीवन शैली) और वन हेल्थ के दृष्टिकोण का समर्थन करता है। यह कार्यक्रम पर्यावरणीय जिम्मेदारी, स्थिरता और आयातित पौध सामग्री पर निर्भरता को कम करने पर जोर देते हैं। खेती के तरीकों को बढ़ावा देकर स्वच्छ पौधा कार्यक्रम भारत की फल उत्पादन और निर्यात में वैश्विक गुरु बनने की महत्वाकांक्षा में योगदान करता है, जबकि इसका पर्यावरणीय प्रभाव भी न्यूनतम होता है। कार्यक्रम के संयुक्त कार्यान्वयन और निगरानी की जिम्मेदारी राष्ट्रीय उद्यानिकी बोर्ड और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के साझे प्रयास से की जाएगी। यह साझेदारी स्वच्छ पौधा कार्यक्रम के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करेगी, जिससे किसानों, नर्सरी मालिकों और अन्य हितधारकों को कार्यक्रम के व्यापक समर्थन से लाभ होगा।

m|kfudh fodkl dk fy, nh?kZdkfyd –f"Vdks.k vkSj oSf'od leFkZu%

आत्मनिर्भर स्वच्छ पौधा कार्यक्रम, स्वच्छ पौधा कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण विस्तार है जिसमें 7 वर्षों के दौरान 2200 करोड़ रूपों का मजबूत बजट आवंटन किया गया है, जो 2030 तक चलेगा। इस पहल का उद्देश्य उद्यानिकी फसलों की उपज बढ़ाना, जलवायु–सहिष्णु किस्मों को अपनाना, और विषाणु और रोगों जैसी समस्याओं से पार पाकर पारिस्थितिकी प्रणालियों की सुरक्षा करना है। आत्मनिर्भर कार्यक्रम भारत भर में स्वच्छ संयंत्र केंद्र स्थापित करेगा जो किसानों को उच्च गुणवत्ता, रोग मुक्त सामग्री प्रदान करेगा जिससे फसल की गुणवत्ता, उपज और जलवायु–सहिष्णुता में दीर्घकालिक सुधार सुनिश्चित होगा। इसके अतिरिक्त एशियाई विकास बैंक (एडीबी) ने किसानों को प्रमाणित रोग मुक्त पौध सामग्री की पहुंच बढ़ाने के लिए कार्यक्रम के लक्ष्यों का समर्थन करने के लिए 98 मिलियन डॉलर का ऋण स्वीकृत किया है। यह वित्तीय समर्थन फसल उपज बढ़ाने, गुणवत्ता में सुधार और जलवायु लचीलापन बढ़ाने के उद्देश्यों को मजबूत करेगा जिससे भारतीय किसान उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादन की बढ़ती वैश्विक मांग को पूरा करने के लिए सक्षम होंगे।

fu"d"kZ

स्वच्छ पौध कार्यक्रम भारत के उद्यानिकी क्षेत्र, किसानों, नर्सरी मालिकों, उपभोक्ताओं तथा वैश्विक बाजारों के लिए व्यापक और दीर्घकालिक लाभ प्रदान करने की क्षमता रखता है। उच्च गुणवत्ता वाली, रोग–मुक्त पौधरोपण सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित कर तथा उत्पादन प्रणाली की स्थिरता को सुदृढ़ करते हुए यह कार्यक्रम फसलों की उपज में वृद्धि, किसानों की आय के अवसरों में सुधार तथा भारत की प्रमुख उद्यानिकी उत्पादों के निर्यातक के रूप में स्थिति को और अधिक सशक्त बनाएगा।स्वच्छ पौध कार्यक्रम में लैंगिक समानता एवं समावेशन पर विशेष बल दिया गया है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि महिला किसान सशक्त हों और उद्यानिकी क्षेत्र के भविष्य को आकार देने में सक्रिय भूमिका निभाएँ। सुदृढ़ नियामक ढाँचे, अत्याधुनिक अवसंरचना तथा समन्वित और सहयोगात्मक प्रयासों के माध्यम से यह कार्यक्रम दीर्घकालिक एवं सतत विकास को प्रोत्साहित करने के लिए तैयार है, जिससे भारतीय कृषि अधिक लचीली, उत्पादक एवं वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी बन सकेगी।

स्वास्थ्य के लिए जरूरी है पोषण वाटिका

vkuan lkfgy[1]] vHk; dqekj[2]] eqds'k dqekj tkVo[2] ,oa vuhrk eh.kk[2]

[1]केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र– पंचमहल, (के.शु.बा.सं.), वेजलपुर, गोधरा (गुजरात)
[2]भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

पोषण वाटिका अर्थात भूमि का वह छोटा टुकड़ा जिसमें घर के समस्त परिवारों हेतु प्रतिदिन सब्जियाँ उगाते है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि परिवार मे सभी सदस्यों को पौष्टिक भोजन प्राप्त हो सके। किचन गार्डन का नया रूप पोषण वाटिका है। संतुलित भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों को ध्यान में रखकर सभी प्रकार की सालाना सतत मिलने वाली सब्जियां लगाई जाती हैं। गृहवाटिका में पोषण वाटिका के निर्माण से पौष्टिक साग–सब्जियाँ का उत्पादन कर सकते हैं। पोषक–उद्यान अपने आप में एक अनुकरणीय वैश्विक सर्वोत्तम अभ्यास का प्रतिनिधित्व करता हैं जिसमें आहार विविधता, पोषण सुरक्षा, कृषि–खाद्य खेती, स्थानीय आजीविका सृजन और पर्यावरणीय स्थिरता के कई लक्ष्यों को संबोधित करने की क्षमता है।

आज की इस बढ़ती आबादी के कारण भोजन उपलब्ध कराने हेतु तरह–तरह की रसायनिक तत्वों का प्रयोग कर साग सब्जियाँ उपलब्ध कराया जा रहा है इससे रसायनिक अवशेष सब्जियों के माध्यम से हमारे शरीर मे पहुचते है एवं तरह–तरह के बीमारियों को जन्म देता है। इसप्रकार रसायनिक तत्वों के कारण मृदा एवं वायु प्रदूषित हो जा रही है जिससे तरह तरह के बीमारियाँ पौधो पर फैलती है एवं जब इसका प्रयोग हम मानव एवं पशु पक्षी इसका प्रयोग करते है तो हमे भी बीमारियों का सामना करना पड़ता है।

पोषण वाटिका मे कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन, विटामिन्स एवं खनिजों की पूर्ति करने वाली सब्जियों का विशेष समायोजन होता है। पोषण वाटिका में छोटी नर्सरी भी होती है,जिसमें आगामी समय हेतु पौध तैयार कर ली जाती है। घर के परिसर के भीतर या घर के आसपास की भूमि स्थानीय खाद्य फसलों को उगाने और उन्हें ताजे फलों और सब्जियों की सस्ती, नियमित और आसान आपूर्ति के साथ सुरक्षित करने के लिए प्रोत्साहित करता है। बाजार में बिक्री हेतु लाए गए सब्जियों में व्यापक पैमाने पर रसायनिक खाद एवं दवाओं के प्रयोग से उत्पाद सब्जियों के सेवन करने से स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है।

महिलाएं यदि पौष्टिक भोजन का नियमित प्रयोग नही करती है इसका असर महिलाओं के साथ जन्मजात शिशुओं के कुपोषित होने की संभावनाएं अधिक बढ़ जाती है। सभी महिलाएं पोषण वाटिका बनाकर अपने परिवार को आर्थिक सहयोग भी दे सकती हैं। यह ग्रामीण महिलाओं के अलावा शहरी महिलाओं के लिए भी इतना ही महत्वपूर्ण है। शहरों में अपने घर के आस पास, छत पर जहां भी जगह मिले पोषण वाटिका बना सकते हैं। आज के इस बढ़ती

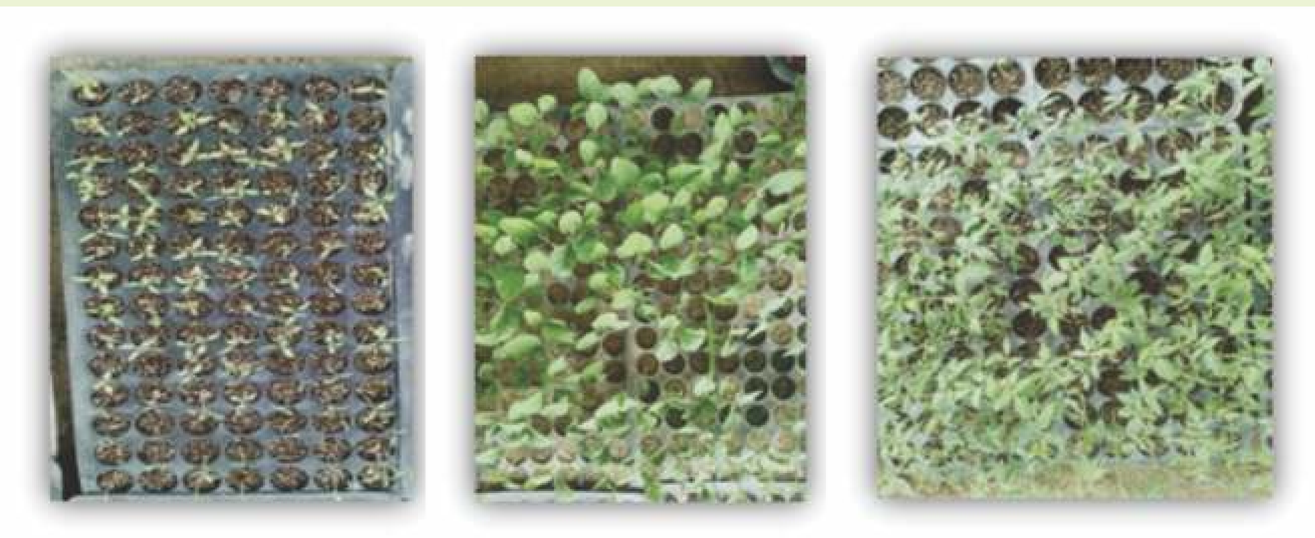

U;wVªh xkMZu@ iks"k.k okfVdk gsrq ikS/k ¼ulZjh½ rS;kj djus dh fof/k

आबादी एवं तरह तरह की बढ़ती बीमारियों के दौर मे लोग अपनी छत पर कई तरह की सब्जियां उगाकर अपना पौष्टिक पोषण हेतु जागरूक होते जा रहे है। इसके साथ ही वे पोषण वाटिका बनाने के लिए गमलों का भी प्रयोग कर रही हैं। उनका मानना है कि अगर हम दैनिक कार्यों के अलावा पोषण वाटिका में समय देते है तो मानसिक रूप से ताजेपन का एहसास होने के साथ ही शरीर को एक प्रकार से प्राकृतिक शक्ति भी मिलती है जिससे हमें ताजगी महशुस होता है। पौष्टिक भोजन ग्रहण करने से घर के सारे सदस्य विशेषरूप से बच्चे और महिलाएं कुपोषण के शिकार से बचे रहते एवं अपने लक्ष्य के प्रति अग्रसर होते जा रहे है। यह विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों में पोषण की कमी को पूरा करने में मदद कर सकता है। पौष्टिक एवं संतुलित भोजन नहीं करने से लोग कुपोषण के शिकार एवं आलसी होते जा रहे है एवं विभिन्न प्रकार के रोगों से ग्रसित होते जा है इस प्रकार मृत्यु दर भी दिन प्रतिदिन अधिक होती जा रही है।

ik"k.k okfVdk

ik"k.k okfVdk ls mRikfnr rkth lfCt;k

ik"k.k okfVdk ;k ik"kd&m|ku dk eq[; mn~ns'; &

- इसका प्रमुख लक्ष्य जैविक रूप से उगाई गई घरेलू सब्जियों और फलों के माध्यम से पोषण प्रदान करना एवं यह भी सुनिश्चित करना है कि भूमि स्वस्थ रहे।
- इस प्रकार खुद फल–सब्जियाँ लगा कर कीटनाशक मुक्त एवं गुणवक्तापूर्ण उत्पाद का आनंद ले सकेंगे ।
- देश के सभी प्रदेशों मे फलों, सब्जियों और यहां तक कि औषधीय पौधों की ताजा आपूर्ति प्रदान करना ।
- प्रतिदिन ताज़ी सब्जियाँ मिलने से परिवार के सदस्य तरह–तरह के बीमारियों से मुक्ति पाते है एवं प्रतिदिन

बाजार से लाये हुए जहरयुक्त सब्जियाँ से भी एवं इससे प्रतिदिन हुए खर्चे से भी मुक्ति पाते है ।

- पोषण वाटिका के तहत पौष्टिक और जड़ी–बूटियों के पौधारोपण से बाहरी निर्भरता कम कर सकते है और समुदायों को उनकी पोषण सुरक्षा के लिए आत्मानिर्भर बनाया जा सकता है ।
- इसका प्रमुख लक्ष्य बच्चों, गर्भवती महिलाओं एवं स्तनपान कराने वाली माताओं को प्रयाप्त मात्रा मे पौष्टिक पोषण उपलब्ध कराना ।
- इसका उद्देश्य है कि आगामी वर्ष तक 0 से 6 वर्ष की आयु के बच्चों में बौनेपन को 38.4 प्रतिशत से घटाकर निम्न प्रतिशत करना है ।
- महिलाओं और बच्चों में कुपोषण की समस्याओं से निपटने के लिए गोभी वर्गीय, मुली, गाजर, पालक, चौलाई, मेथी, सहजन, अमरूद, केला, तुलसी इत्यादि पौधे पोषण वाटिका में लगाए जायेंगे।
- सभी हितधारक आंगनवाड़ियों, स्कूलों और ग्राम पंचायतों में प्रदान किए गए स्थान में पोषण वाटिकाओं के लिए वृक्षारोपण प्रयासों में भाग लेंगे।
- पोषण वाटिका एक सर्वोत्तम अभ्यास को बढ़ा सकती है जो सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में योगदान दे सकती है।
- पोषण वाटिका आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की क्षमता का निर्माण करने में मदद कर सकती है, जिसमें उनके अपेक्षित श्रम के लिए मुआवजा बढ़ाना शामिल है।

ik"k.k okfVdk dk egRo

- यह एक स्थायी जीवन चक्र दृष्टिकोण को अपनाकर अल्प–पोषण और अति–पोषण दोनों से निपटने में मदद करता है।
- यह ताजी सब्जियों की सस्ती, नियमित और आसान आपूर्ति भी सुनिश्चित करता है, जो पोषण के लिए बुनियादी हैं।
- हर दिन अपनी पसंदीदा और ताजी सब्जियां मिलेंगी। इससे मानसिक प्रसन्नता प्राप्त होगी।
- यह पौष्टिक भोजन प्रदान करता है जो बच्चों में मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी और छिपी हुई भूख को संबोधित कर सकता है।
- बगीचे में सब्जियों के आदान–प्रदान से संबंधों में सुधार होगा।
- यह बच्चों को उत्प्रेरक में बदल देता है जो समाज में जागरूकता और व्यवहार परिवर्तन को बढ़ावा देते हैं।
- इससे पैसे की बचत होगी पैसों की जरूरत को पूरा करने के लिए बची हुई सब्जियों की बिक्री से वित्तीय आय में वृद्धि होगी।
- उद्यान कार्यक्रम को महिलाओं द्वारा समूहों में, आंगनवाड़ियों, स्कूलों में अच्छी तरह से किया जा सकता है।
- यह सरकारी स्कूलों और आंगनवाड़ी केंद्रों में मध्याह्न भोजन के मेनू में विविधीकरण लाता है।
- यह छात्रों के बीच सुरक्षित और स्वस्थ खाने की आदतों को बढ़ावा देता है।

ik"k.k okfVdk e rjg&rjg dh lfCt;k yxku dk mi;ä le;

Ø-l-	ekSle	ekg	lCth oxÊ; Qly
1.	खरीफ	जून – सितंबर	टमाटर, मिर्ची, कुंदरु, बैगन, भिंडी, खीरा, लौकी, तोरई , ककरी , परवल
2.	रबी	अक्टुबर –जनवरी	बंदगोभी, फूलगोभी, गांठगोभी, ब्रोकली, मुली, गाजर, चुकुंदर, शलजम, केल, लहशुन, प्याज, मेथी, पालक
3.	जायद	फरवरी –मई	तरबूज, खरबूज, खीरा, ककरी, मिर्च, भिंडी, टमाटर, बैगन, चौलाई

lfCt;k dk x.koäki.k fdLek dk p;u

Ø-l-	lCthoxÊ; Qly	çtkfr;k
1	टमाटर	काशी आदर्श, काशी अमन, अर्का अपेक्षा, अर्का विशेष , अर्का सम्राट
2	मिर्च	अर्का ख्याति, अर्का हरिता, काशी तेज, काशी शुर्ख, सी एच–1
3	कुंदरु	थार सुंदरी,सुलभा, इन्दिरा कुंदरु –05 , इन्दिरा कुंदरु –35
4	बैगन	थार रचिता, अर्का हर्षिता, अर्का अविनाश, काशी तरु, काशी संदेश
5	भिंडी	काशी लालिमा, अर्का निकिता,पूसा भिंडी –5, काशी वरदान
6	लौकी	थार समृद्धि, अर्का बहार, पूसा नवीन, नरेंद्र शिवानी
7	खीरा	शीतल, पूसा उदय, पूसा उदय, पूसा प्रियंका
8	तोरई (चिकनी /धारीदार)	पूसा चिकनी, आनंद तोरई–2,पूसा स्नेहा (चिकनी तोरई) और सत्पुतिया, अर्का सुजात, पूसा नसदार (धारीदार तोरई)
9	ककरी	थार शीतल, पूसा उत्कर्ष
10	परवल	राजेंद्र परवल –1, राजेंद्र परवल –2 , काशी अलंकार , नरेंद्र परवल – 260, नरेंद्र परवल –307 , चेस हाइब्रिड –1
11	बंदगोभी	पूसा अगेती, पूसा मुक्ता, पूसा ड्रम हैड, गोल्डेन एकड़
12	फूलगोभी	पूसा दीपाली, सबौर अग्रिम, पूसा केतकी, पूसा मेघना , पूसा बिटा–केशरी
13	गांठगोभी	पूसा विराट, पलम टेंडर क्नोब, व्हाइट विएना
14	ब्रोकली	पूसा ब्रोकोली, पलम कंचन, पलम विचित्रा, पलम समृद्धि
15	मुली	पूसा चेतकी, पूसा रेशम , काशी स्वेता ,पंजाब सफ़ेद
16	गाजर	पूसा केसर, पूसा रुधिरा, पूसा कुल्फी, काशी कृष्णा
17	चुकुंदर	अर्लि वंडर, अवोन अर्लि, डेट्राइट डार्क रेड
18	लहशुन	यमुना सफ़ेद –1, यमुना सफ़ेद –2 , गोदावरी , स्वेता
19	शूरण	श्री पद्मा, बिधान कुसुम, श्री अथिरा
20	पालक	पूसा पालक, पंजाब ग्रीन, जोबनेर ग्रीन, थार हरिपर्णा
21	चौलाई	अर्का वर्णा, अर्का सुगुना, अर्का समरक्षा, पूसा किरण,पूसा लाल चौलाई

lfCt;ksa esa foVkfeUl ,oa [kfut

Ø-l-	foVkfeUl	lzksr
1	विटामिन ए	बथुआ, गाजर, चुकुंदर, सहजन
2	विटामिन बी 1	मिर्च,पालक, चौलाई, बैगन, पत्तागोभी
3	विटामिन बी 2	मेथी, चौलाई, पालक
4	विटामिन बी 3	मटर, पालक, चौलाई, हरी मिर्च
5	विटामिन बी 9	हरी पत्तेदार सब्जियाँ
6	विटामिन सी	सहजन की हरी पत्तियाँ, धनिया की पत्तियाँ, मिर्च, टमाटर, ब्रोकोली
7	विटामिन –ई	हरी सब्जियाँ

Ø-l-	[kfut	lzksr
1	कैल्सियम	करी पत्ता, चौलाई, मेथी की पत्तियाँ
2	फास्फोरस	चौलाई, लहशुन
3	लौह तत्व	चौलाई
4	पोटाशियम	पालक, चौलाई

बेबी कॉर्न की उत्पादन तकनीक

'kkfr nsoh cEckfj;k[1]] lhek lsiV[2] ,oa lqfe=k nsoh cEckfj;k[3]

[1,2]भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान लुधियाना पंजाब–141 004
[3]श्री करण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय जोबनेर जयपुर राजस्थान–303 328

बेबी कॉर्न एक विशेष प्रकार की मक्का है जिसके भुट्टे अनिषेचित ओर अपरिपक्व अवस्था मे रेशेदार कोपल उदभव के 1–2 दिन बाद तोड़ लिये जाते है। बेबी कॉर्न मुख्यतः सब्जी के लिए उगाई जाती है जिसकी माँग आज के परिपेक्ष मे शहरी क्षेत्रो मे दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है। बेबी कॉर्न किसानों को नियमित आय एवं पोषण युक्त भोजन व पशुओं के लिए हरा चारा सुनिश्चित करवाती है। यह प्रोटीन, फॉस्फोरस, कैल्शियम, आयरन व विटामिन का अच्छा स्त्रोत है। सब्जी के अलावा इसको अचार, हलवा, खीर, पकोड़े, सलाद, लड्डू, कैंडी, बर्फी, जैम इत्यादि मे भी उपयोग किया जाता है।

mRiknu rduhd %

{ks= dk p;u%& इस फसल को सामान्य मक्का से 400 मीटर की दूरी पर उगाना चाहिए क्योंकि परागकण इसकी गुणवत्ता को खराब करते है। सामान्यतया बेबी कॉर्न की माँग शहरी क्षेत्रो में बहुत रहती है अतः इसको शहर के आसपास वाले क्षेत्रो मे उगाना लाभदायक है।

e`nk p;u%& बेबी कॉर्न जलभराव हेतु अति संवेदनशील है। खेत मे मात्र 1 से 2 दिनो तक जल भराव की स्थिति मे भी इसकी उपज मे काफी गिरावट आ सकती है। अतः फसल को उचित जल निकास वाली मिट्टी मे ही उगाना चाहिए।

cqvkbZ dk le;%& यह फसल 10 डिग्री सेंटीग्रेड से ज्यादा तापमान वाले क्षेत्रो मे पूरे वर्ष भर उगाई जा सकती है। हालाँकि अगस्त से नवम्बर तक बोई गई फसल सबसे अधिक उपज देती है। उत्तरी भारत मे 15 दिसंबर से जनवरी अंत तक भीषण सर्दी रहती है अतः इस दौरान इसे नहीं उगाया जा सकता। अच्छी गुणवत्तायुक्त बेबी कॉर्न हेतु सामान्य मक्का और बेबी कॉर्न की बुआई में 10–15 दिनों का अंतराल रखना चाहिए।

fdLesa %

mÙkjh igkM+h {ks=	e/; if'peh {ks=	mÙkj iwohZ eSnkuh {ks=	çk;}hih; {ks=	e/; if'peh {ks=
आईएमएचबी 1539, एलबीसीएच 3, एचएम–4, शिशु, विवेक हाइब्रिड 27, वीएल बेबी कॉर्न 1, सीओबीसी 1	आईएमएचबी 1532, एचएम–4, शिशु, विवेक हाइब्रिड 27, वीएल बेबी कॉर्न 1, सीओबीसी 1	विवेक हाइब्रिड 27, एचएम–4, शिशु, वीएल बेबी कॉर्न 1, सीओबीसी 1	बेबी कॉर्न जीऐवाईएमएच 1, विवेक हाइब्रिड 27, एचएम–4, शिशु, सीओबीसी 1, वीएल बेबी कॉर्न 1	आईएमएचबी 1532, विवेक हाइब्रिड 27, एचएम–4, शिशु, सीओबीसी 1, वीएल बेबी कॉर्न 1

cht nj ,oa cht mipkj %& बेबी कॉर्न की बुवाई हेतु 20–25 किलो ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त रहता है। बुआई से पहले बीज को बाविस्टिऩ + कैप्टान के मिश्रण (1:1) (@ 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। तना भेदक एवं तना मक्खी से रोकथाम हेतु इमिडाक्लोप्रिड (गाउचो) (@ 6 एमएल/किग्रा बीज) से बीजोपचार करना चाहिए।

cqvkbZ dh fof/k %& खरीफ के मौसम मे फसल को जल भराव से बचाने हेतु मैड पर बोना चाहिए। उचित अंकुरण एवं शीघ्र वृदि हेतु बीज को 3–5 सेंटीमीटर की गहराई पर बोना चाहिए। बुआई मेड के दक्षिणी भाग में करनी चाहिए बेबी कॉर्न हेतु पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे के बीच की दुरी 60 सेमी. × 15–20 सेमी. होनी चाहिए।

vrQlyhdj.k %& कम अवधि की फसल होने के कारण बेबी कॉर्न अंतफसलीकरण के लिए काफी उपयुक्त है। आम तौर पर बेबी कॉर्न को चौड़ी कतारों में लगाया जाता है जिसके कारण विकास के प्रारंभिक चरण में सौर विकिरणों का कुशल उपयोग नहीं हो पाता है एवं खरपतवार का प्रकोप भी अधिक होता है। मध्यम अवधि की सह फसल के साथ अंतफसलीकरण भूमि और सूर्य के प्रकाश के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करती है। इसके साथ ही अंतरफसल से अधिक परेशानी पैदा करने वाले खरपतवारों का उद्भव भी कम हो जाता है। सब्जियों, दालों, फूलो आदि के साथ सहफसली खेती से अतिरिक्त आय भी प्राप्त होती है। सर्दी के मौसम में बेबी कॉर्न के साथ अंतःफसल के लिए कम समय मे पककर तैयार होने वाली सब्जियाँ जैसे मेथी, धनिया, पालक, गाजर, पत्तागोभी, फूलगोभी, चुकंदर, मूली आदि उगाई जा सकती है। खरीफ में हरी फली और चारे के लिए लोबिया और हरी पत्तियों के लिए धनिया को बेबी कॉर्न के साथ अंतरफसलीकरण किया जा सकता है। बेबी कॉर्न की उर्वरकों की अनुशंसित खुराक के अतिरिक्त अंतरफसलों के उर्वरकों की अनुशंसित खुराक का प्रयोग किया जाना चाहिए।

[kjirokj çca/ku %& अंकुरण पूर्व एवं बुआई के 0–2 दिन बाद एट्राजिन / 500 ग्राम/हेक्टयर को 500 लीटर पानी में घोलकर खेत में छिड़काव करे। बुआई के 25–30 दिन बाद एक निराई गुड़ाई करे या ट्रोपेरामेजॉन (25 ग्राम/हेक्टयर) और ट्रेम्बोट्राइन (120 ग्राम/हेक्टयर) नामक खरपतवारनाशियों का छिड़काव करे ।

flapkbZ çca/ku%& बेबी कॉर्न की खेती में सिंचाई एक महत्वपूर्ण पहलू है क्योंकि यह सीधे फसल की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता को प्रभावित करती है। अंकुरण अवस्था, घुटनों तक की ऊंचाई, रेशम निकलने और तुड़ाई की अवस्था जल तनाव के लिए सबसे संवेदनशील अवस्थाएं हैं इसलिए इन अवस्थाओं में सिंचाई सुनिश्चित की जानी चाहिए। फसल के लिए हल्की और बार–बार सिंचाई वांछनीय है।

iks"kd rRo çca/ku

फसल अवस्था	उर्वरक (किग्रा./है.)		
	यूरिया	डीएपी	एमओपी
बुआई	25	125	100
चार पत्ती अवस्था	65	–	–
आठ पत्ती अवस्था	100	–	–
नर पुष्पन से पहले	80	–	–
पहली तुड़ाई के बाद	50	–	–

fMVlfyx ¼uj xPN gVkuk½& परागकण बेबी कॉर्न की गुणवत्ता को खराब करता है तथा नर गुच्छा इसकी ऊर्जा को व्यर्थ में बर्बाद करता है। अतः गुणवत्ता आश्वासन एवं अधिक उपज हेतु बेबी कॉर्न मंजरी (नर पुष्प) को हटा देना चाहिए। नर मंजरी हटाने का कार्य सुबह के समय पंक्ति की दिशा मे किया जाना चाहिए। डिटेसलिंग के समय पत्तियों को नहीं हटाया जाना चाहिए अन्यथा यह प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करेगा जिससे उपज भी कम हो सकती है। नर बांझ (स्टराइल) किस्मों (शिशु) मे डिटेसलिंग की जरुरत नहीं होती है।

r|Mkb ½&

बेबी कॉर्न की तुड़ाई सुबह या शाम के समय (जब तापमान कम हो) करनी चाहिए। यह फसल खरीफ के दौरान 45–50 दिनों मे तथा रबी मे 70–80 दिनों मे तुड़ाई हेतु तैयार हो जाती है। सिल्क उद्धभव के 1–3 दिन बाद जब सिल्क की लम्बाई 1–2 सेंटीमीटर हो बेबी कॉर्न की तुड़ाई कर लेनी चाहिए। बेबी कॉर्न की फसल से खरीफ मे 4–6 तथा रबी मे 7–8 तुड़ाई ली जा सकती है। दो तुड़ाई के मध्य खरीफ मे 2 दिन तथा रबी मे 5–6 दिन का अंतराल रखा जाना चाहिए। पौधे के बचे हुए हिस्से (मुख्य तना, नर मंजरी) को पशुधन के लिए पौष्टिक हरे चारे की तरह काम में ले सकते है।

r|Mkb mijkar çca/ku½&

1. अधिक बाजार मूल्य अर्जित करने के लिए तुड़ाई उपरांत बेबी कॉर्न के छिलके एवं रेशे हटा कर उचित पैकिंग करके ही बेचना चाहिए।
2. एक समान आकार व रंग वाले बेबी कॉर्न को एक पैकेट में रखना चाहिए।
3. कम तापमान (5–6 डिग्री सेंटीग्रेड) एवं अधिक आर्दता (90%) वाले वातावरण मे बेबी कॉर्न के भुट्टे 6–7 दिन तक संग्रहित किये जा सकते है।

x.koÙkk çrhd ½& पीले रंग, नियमित पंक्ति वाले, आकृति एवं आकार मे एक समान, साफ– सुथरे, छिलके एवं रेशे रहित तथा 12 सेंटीमीटर से कम लम्बाई व 2 सेंटीमीटर से कम मोटाई वाले भुट्टे आदर्श श्रेणी के माने जाते है।

mRiknu½& बेबी कॉर्न की खेती से हेक्टयर 1.8–2.0 टन छिलका रहित भुट्टे (7–9 टन छिलके सहित) का उत्पादन लिया जा सकता है। इसके अलावा 25–30 टन/हेक्टयर पशुओ हेतु हरा चारा भी मिलता है।

ykHk ½& बेबी कॉर्न की खेती से 50000–60000 रु. प्रति हेक्टयर शुद्ध लाभ मिल जाता है।

cch d,u dh [krh d Qk;n

1. बेबी कॉर्न की बुआई एवं कटाई उपरांत की जाने वाली गतिविधियाँ (भूसी निकालना, रेशम निकालना, ग्रेडिंग और पैकिंग) बड़ी संख्या में रोजगार के अवसर पैदा करते हैं।
2. बेबी कॉर्न की साल भर की बिक्री किसानों को आय का एक सतत स्रोत प्रदान कर सकती है।
3. बेबी कॉर्न की एक फसल से 2–2.5 महीने की छोटी अवधि में 50,000–60,000 रु. प्रति हेक्टयर तक की कमाई हो सकती है।
4. बेबी कॉर्न के उप–उत्पाद जैसे मक्के के डंठल, नर मंजरी, रेशम और भूसी का उपयोग मूल्यवान हरे चारे के रूप में किया जा सकता है। यह बिना किसी अतिरिक्त लागत के दुधारू पशुओं के लिए साल भर हरे चारे की आपूर्ति सुनिश्चित करता है।

फालसा में छंटाईः बेहतर फसल के लिए जरूरी कदम

'kfä [ktfj;k] ,- d- jk;] dud yrk ,o jkt dekj
कृषि विज्ञान केन्द्र– पंचमहल,वेजलपुर, गोधरा
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

फालसा एक गर्मी में उगने वाला फल है, जो विशेष रूप से भारत में पाया जाता है। यह स्वाद में खट्टा–मीठा और सेहत के लिए अत्यधिक फायदेमंद होता है। फालसा का पेड़ बहुत ही कठोर और कम देखभाल वाले होते हुए भी अत्यधिक फायदेमंद है। इसका फल, पत्तियाँ और तना सभी आयुर्वेदिक चिकित्सा में उपयोग किए जाते हैं। लेकिन, फालसा की अच्छी फसल के लिए उपयुक्त देखभाल और छंटाई का अत्यधिक महत्व है। छंटाई से न केवल पौधों की वृद्धि में मदद मिलती है, बल्कि यह फालसा के उत्पादन और गुणवत्ता को भी बढ़ाती है।

NkVkÃ dk egRo

फालसा में छंटाई करने से पौधों के स्वास्थ्य और उत्पादन पर सीधा असर पड़ता है। छंटाई का मुख्य उद्देश्य पौधे की संरचना को ठीक करना, मर चुके और पुरानी/असंतुलित शाखाओं को हटाना और नई शाखाओं को प्रोत्साहित करना होता है। यह फालसा के पेड़ को अधिक फलदार और मजबूत बनाता है, जिससे उत्पादन बढ़ता है। इसके अतिरिक्त, छंटाई से पौधे को सही दिशा में बढ़ने का मौका मिलता है, जिससे उसका आकार और स्वरूप बेहतर होता है।

Qkylk esa NkVkÃ ds ykHk

1- iksèkksa dh LoLFk o`f)% फालसा के पेड़ में अनावश्यक शाखाओं और पत्तियों का बढ़ना रुकता है, और पेड़ की ऊर्जा मुख्य रूप से फल और फूल उत्पादन पर केंद्रित होती है। छंटाई से नए पत्तों और शाखाओं के विकास को बढ़ावा मिलता है, जिससे पेड़ की वृद्धि स्वस्थ रहती है।

2- Qyksa dk csgrj vkdkj vkSj xq.koÙkk% छंटाई से पेड़ पर फल अधिक व्यवस्थित रूप से लगते हैं। इससे फलों को सूरज की रोशनी और हवा का बेहतर प्रवाह मिलता है, जिससे फलों का आकार बढ़ता है और उनका स्वाद बेहतर होता है। साथ ही, फलों की गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

3-jksx vkSj dhVksa ls lqj{kk% जब पौधों में मृत और संक्रमित शाखाएं होती हैं, तो वे कीटों और रोगों के लिए आदर्श स्थान बन जाती हैं। छंटाई करके इन संक्रमित शाखाओं को हटा देने से पौधे को रोग और कीटों से बचाव होता है।

4-iksèkksa dh lajpuk dks etcwr cukuk ;k fey rh g% छंटाई से पेड़ की शाखाएं संतुलित और मजबूत बनती हैं। यह पेड़ को हवा और मौसम के प्रतिकूल प्रभावों से बचाता है और उसकी उम्र बढ़ाता है।

Qkylk dh NkVkÃ ds çdkj

1.Qy vkSj Qyus ds ckn dh NkVkÃ% फालसा में फल आने के बाद, छंटाई की जाती है। इस प्रकार की छंटाई में मुख्य रूप से पुराने, मृत और असंतुलित शाखाओं को हटाया जाता है। इसके बाद, उस पौधे को फिर से स्वस्थ रूप से बढ़ने का मौका मिलता है।

2- o`f) dks fu;af=r djus okyh NkVkÃ% यह छंटाई पौधे की वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए की जाती है, ताकि वह कहीं पर ज्यादा फैलकर दूसरे पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा न करे। इसमें मुख्य रूप से अनावश्यक और अत्यधिक बढ़ी हुई शाखाओं को काटा जाता है।

3- eqy 'kk[kkvksa dh NkVkÃ% यह छंटाई निचली शाखाओं को हटाने के लिए की जाती है। जब मुख्य तने से निकलने वाली शाखाएं एक विशेष ऊंचाई पर होती हैं, तो उन्हें काट दिया जाता है ताकि पौधा अधिक ऊंचाई तक बढ़े और उसका आकार संतुलित रहे।

Qkylk esa NkVkÃ djus ds le;

फालसा की छंटाई का सही समय बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पौधे की वृद्धि और उत्पादन पर प्रभाव डालता है। फालसा की खेती में छंटाई एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, क्योंकि यह समय से पहले फूलने, अधिक फल सेट होने और बेहतर फल गुणवत्ता को बढ़ावा देती है। आदर्श छंटाई का मौसम सर्दियों (दिसंबर–जनवरी) का होता है, विशेष रूप से उत्तर भारत में यह सबसे उपयुक्त समय माना जाता है। इस समय पौधे सुषुप्तावस्था में होते हैं और छंटाई से उन्हें कम नुकसान होता है। जबकि दक्षिण भारत में दो बार छंटाई की जाती है, पहली छंटाई जनवरी में और दूसरी जुलाई–अगस्त में की जाती है।

फालसा के पौधों को आमतौर पर प्रति वर्ष 50–100 सेमी की ऊंचाई तक छांटा जाता है, जबकि अधिक उपज और बेहतर फल गुणवत्ता के लिए 20–25 सेमी तक गंभीर छंटाई की सिफारिश की जाती है। विभिन्न छंटाई तीव्रताओं

के परिणाम अलग–अलग होते हैं, जिसमें 100 सेमी की छंटाई फल गुच्छों और कुल उपज के मामले में सबसे अच्छे परिणाम देती है।

NVkÃ d nkjku è;ku j[ku ;kX; ckr

1. **ljf{kr midj.k dk ç;kx%** छंटाई के लिए हमेशा तेज और साफ उपकरणों का उपयोग करें। इससे पौधे में संक्रमण का खतरा कम होता है।

2. **lgh rduhd dk ikyu dj%** शाखाओं को हमेशा तने से कुछ इंच ऊपर काटें, ताकि पौधे का संतुलन बनाए रखा जा सके।

3. **çk–frd :i l c<u dk volj n%** कभी–कभी अत्यधिक छंटाई से पौधा कमजोर हो सकता है, इसलिए हमेशा ध्यान रखें कि छंटाई से प्राकृतिक विकास में रुकावट न हो।

fu"d"k

फालसा के पौधों में छंटाई न केवल बेहतर उत्पादन के लिए आवश्यक है, बल्कि यह पौधों के स्वास्थ्य को भी बेहतर बनाए रखती है। यह एक सरल लेकिन प्रभावी तरीका है, जिससे पौधे की संरचना को नियंत्रित किया जा सकता है और फलों की गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। फालसा की छंटाई के द्वारा न केवल हम बेहतर फसल प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि पौधों को स्वस्थ और रोगमुक्त भी रख सकते हैं। इस प्रक्रिया का पालन करते हुए, किसान अधिक लाभ और बेहतर उत्पाद प्राप्त कर सकते हैं, जो उनके मेहनत का सही मूल्यांकन होता है।

Qkylk dh NVkÃ djr g,

Qkylk dk iM Qyk l yn x;k g

Qkylk d vifjiDo Qy

iM ij ykfyek] id Qylk

फोगः थार मरुस्थल की एक बहुपयोगी दुर्लभ वनस्पति

ed'k dekj cjoky] je'k dekj ,o txu Çlg xkjk
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

फोग जिसका वानस्पतिक नाम कॉलिगोनम पॉलीगोनोइड्स लिन है, जो कि पोलिगोनैसी परिवार के अंतर्गत आता है। पोलिगोनैसी फ़ैमिली को बकव्हीट, स्मार्टवीड या नॉटवीड परिवार के रूप में भी जाना जाता है। फोग को स्थानीय भाषा मे 'फोग' 'फोगला' 'फोगारो' आदि नामों से भी जाना जाता है। आमतौर पर फोग एक छोटा अरोमिल, सर्दियों मे पत्तझड़ करने वाला सफेद रंग के गाँठदार और नाजुक शाखाओं के साथ 3–4 फीट ऊँचा बारहमासी झाड़ी के रूप में पाया जाता है। कभी–कभी इसकी फोग 2–3 फीट मोटे तने के साथ 12–15 फीट ऊंचाई तक के पेड़ के रूप में भी पाया जाता है। फोग अपने प्राकृतिक आवास थार रेगिस्तान के शुष्क क्षेत्र में अत्यधिक सूखा, ठंड़एंम गर्म तापमान के प्रति प्रतिरोधक होता है। यह किसी भी प्रकार की वनस्पति की अनुपस्थिति में बहुत अच्छी तरह से बढ़ने के साथ साथ थार रेगिस्तान के रेतीले भागों मेंप्रमुख बायोमास उत्पादक है। यह रेगिस्तान को फैलने से रोकने वाले पादप समुदाय का प्रमुख घटक होता है। फोग का वानस्पतिक वर्गिकरण निम्नानुसार हैः

Qkx dk HkkSxksfyd foLrkj

भौगोलिक रूप से फोग का फैलाव विश्वव्यापी है, जो उष्णकटिबंधीय क्षेत्रो से लेकर आर्कटिक तक पाया जाता है, लेकिन इसकी अधिकांश प्रजातियां उत्तरी समशीतोष्ण क्षेत्र में ही केंद्रित पायी जाती हैं। प्राकृतिक रूप से पोलिगोनैसी फेमिली की चार प्रजातियाँ जिनमें से कॉलिगोनम की एक, पॉलीगोनम की चौदह, रुमेक्स की दो तथा एमेक्स की एक प्रजाति कि उत्पत्ति स्वाभाविक रूप से राजस्थान से हुई है। इन चार प्रजातियों के अलावा, पोलिगोनैसी फेमिली की छः और प्रजातियों को सजावटी पौधो के रूप में उगाया जाता है। यह पूरे दक्षिणी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, पश्चिमी और मध्य एशिया में मुख्य जैव विविधता केंद्र के रूप में फैला हुआ है। फोग पश्चिमी एशिया के मरुस्थलीय क्षेत्रो से भारत के दक्षिणी पंजाब और पश्चिमी राजस्थान, पाकिस्तान में बूगीटी हिल, पूर्वोत्तर अफगानिस्तान, फारस, अर्मेनिया और सीरिया में फैला हुआ है। फोग को थार मरुस्थल की एक बहुत कि प्रमुख पादप प्रजाति दर्जा दिया गया है। ऐतिहासिक रूप से, फोग सक्रिय रेत के टीलों में प्रबल रूप से पाई जाने वाली बारहमासी झाड़ी थी, जो अधिकांशतः रेगिस्तानी क्षेत्र में रेत के टीलों को स्थिर रखती थी। यह रेगिस्तान के रेतीले क्षेत्रों में किसी भी प्रकार की वनस्पति की अनुपस्थिति में प्रमुख बायोमास उत्पादक के रूप मे पहचान रखता है। फोग की जड़ों से बने चारकोल की बहुत अधिक मांग के साथ–साथ अत्यधिक चराई और रेत खनन के कारण इसका क्षेत्र बहुत तेजी से घटता जा रहा है। भारतीय शुष्क क्षेत्र में इसका बड़े पैमाने पर गैर न्यायिक तरीके से दोहन होने के कारण फोग को आई.सी.यू.एन. की रेड डाटा बुक में लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियों के रूप में उद्धृत किया गया है।

राजस्थान का पश्चिमी भाग भारत का शुष्क क्षेत्र है जो थार मरुस्थल का प्रमुख भाग है, तथा यह 240 उत्तर से 35.50 उत्तर तथा 70.70 पश्चिम से 76.20 पश्चिम के मध्य स्थित है, जो राजस्थान के 12 जिलों बाड़मेर, बीकानेर, चूरू, जैसलमेर, जालोर, झुंझुनू, जोधपुर, नागौर, पाली, सीकर, श्री गंगानगर और हनुमानगढ़ मे फैला हुआ हैं। राजस्थान के बाड़मेर, बीकानेर, चूरू, जैसलमेर, जयपुर और जोधपुर जिलों में फोग बहुतायत से पाया जाता है, जंहा यह एक विशाल वनस्पति के रूप में रेत के टीलों पर उगता है। यह झाड़ी अन्य जगहों की तुलना में जैसलमेर और बीकानेर जिलों में अधिक प्रबलता में पाई जाती है।

Qkx dk vkfFkZd egRo

यह अक्सर आने वाले अकालों के दौरान जीवन निर्वाह के लिए भोजन का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत होता है तथा व्यावसायिक और औषधीय गुणो के कारण बहुत उपयोगी होता है। फोग के अधपक्के फल बहुत ही पौष्टिक होते है, इनमे 18 प्रतिशत प्रोटीन, 17 प्रतिशत शर्करा, 6.4 प्रतिशत वसा, 9.1 प्रतिशत रेशे, 0.7 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम विटामिन बी, 647 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम कैल्शियम, 420 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम फॉस्फोरस तथा 12.7 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम लोहा पाया जाता है। इसके साथ ही फोग के सभी भागों मे जैव सक्रिय तत्व जैसे फिनोल, फ्लावोनोइड्स तथा ऑक्सीकरण रोधी पदार्थ बहुतायत से पाये जाते है, जो कि बहुत सारी बीमारियों से बचाने मे सहायक होते है। भारत के शुष्क क्षेत्रों में अकाल के समय पुष्प कलिकाओं और रसीले फलों को भोजन के रूप मे खाया जाता है। पुष्प कलियों को स्थानीय भाषा में "लैसन" कहा जाता है, जिसको रेगिस्तानी क्षेत्र में ग्रीष्मकाल के दौरान बटर मिल्क (मट्ठा)

एवं नमक के साथ मिलाकर पिया जाता है, जो शरीर को शीतलन प्रभाव देती हैं तथा आदमी को लू से बचने मे मदद करता है। स्थानीय लोग फोग की पुष्प कलिकाओं को रोटी के साथ मक्खन या नारियल के तेल में पकाकर कई प्रकार स्वादिष्ट व्यंजन भी तैयार करते है। रेगिस्तान के मूल निवासी फोग की जड़ों और मोटी शाखाओं का उपयोग ईंधन के रूप में करते है। फोग पौधे की हरी शाखाएँ जो पौष्ठिकता से भरपूर होती है, ऊंट और बकरियों के लिए चारे के रूपमे काम मे ली जाती है। ग्रामीण इलाकों में इसकी सुखि लकड़ीयों का उपयोग झोपड़ियां, आश्रय तथा कुओं के मचान बनाने में किया जाता है। पौधे का जलीय पेस्ट अफीम की भारी खुराक और ऑक के जहरीले प्रभावों के के विरुद्ध एंटी डॉट केरूप में कार्य करता है। साथ ही पशुओं में मूत्र संबंधी समस्याओं को ठीक करने के लिए फोग का काढ़ा दिया जाता है। फोग की पुष्प कलिकाएँ अत्यधिक पौष्टिकता के साथ ही कई सामान्य बीमारियों जैसे कि अस्थमा, खांसी, सर्दी एवं टाइफाइड मे भी बहुत लाभदायक होती हैं। औषधीय रूप से इसका उपयोग एक्जिमा के इलाज में लिए किया जाता है। राजस्थान के भील और गरासिया आदिवासी लोग फोग के पोधे को उबाल कर बनाए काढ़े का उपयोग गले–मसूड़ों के लिए गार्गल के रूप में किया जाता है।

Qkxyk

फोग का पौधा जैव सक्रिय योगिकों का बहुत ही समृद्ध स्रोत होता है। जैव सक्रिय योगिकों मे फिनोल, फ्लेवोनोइड्स, एल्केलॉइड्स, टैनिन, स्टेरॉयड और टेरपीनोइड्स मुख्य रूप से पाये जाते है। इसमे कैलीगोनोइड्स, टेराकोसन–4–ऑलिड, स्टेरॉइडल एस्टर, बीटा–साइटोस्टेरोल ग्लूकोसाइड और युरसोलीक भी पाये जाते है। इसके अलावा फोग की पुष्प कलिकाओं मे कुछ आवश्यक तेल भी पाये जाते है जिनमे अपने शरीर के लिए आवश्यक ओमेगा–3 वसीय अम्ल जैसे कि 9,12,15 ऑक्टाडेक्ट्रीयनोइक एसिड भी पाया जाता है। इन जैव सक्रिय योगिकों की प्रचुरता के करना फोग बहुत सारी बीमारियों जैसे कि केंसर, हृदय से सबंधित, अल्जीमेर्स एवं मधुमेय जैसे बीमारियों से बचाने एवं ठीक करने मे सिद्ध होता है। इसके साथ कि इसके जैव सक्रिय योगिकों का उपयोगा कार्यात्मक भोजन और न्यूट्रास्यूटिकलके निर्माण मे बहुत ही लाभकारी सिद्ध हो सकता है। इस बदलती जलवायु स्थिति मे पादप जनित जैव सक्रिय यौगिकों के निर्माण की तत्काल आवश्यकता है, इसलिए फोग एक प्राकृतिक, प्रभावी और सुरक्षित एंटीऑक्सिडेंट स्रोत हो सकता है जो कि नई दवाओं के निर्माण के साथ खाद्य पदार्थों के एंटीऑक्सिडेंट बायोफोर्टिफिकेशन एवं न्यूट्रास्यूटिकल एजेंट के रूप में बहुत लाभकारी साबित होगा।

इस तरह से हम कह सकते है कि फोग का संरक्षण और इसकी खेती थार रेगिस्तान के ग्रामीण परिवेश ही नहीं बल्कि पूरे क्षेत्र के लिए जीवन रेखा साबित हो सकती है। इसलिए, फोग की उपर्युक्त उच्च मूल्यवान आर्थिक एवं सामाजिक उपयोगिताओं के कारण भारत के थार रेगिस्तान में इस पौधे के संरक्षण और खेती की बहुत आवश्यकता है।

Qkx

Qkxyk

पीलूः मरुस्थल की अनमोल धरोहर और औषधीय वरदान

'khry jkor ,oa jked`'k eh.kk
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

औषधीय पौधों की मांग और आपूर्ति में अंतर हमेशा एक अड़चन रहा है क्योंकि अधिकांश औषधीय पौधों का अत्यधिक दोहन किया जाता है और उचित संरक्षण उपायों को समय पर और प्रभावी ढंग से लागू नहीं किया जाता है जिससे उनके बड़े पैमाने पर विलुप्त होने का खतरा होता है। पीलू, जिसे वैज्ञानिक रूप से साल्वाडोरा पर्सिका के नाम से जाना जाता है। यह पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में दातुन (प्राकृतिक टूथब्रश) के रूप में लोकप्रिय है। यह मुख्यतः गुजरात, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और मध्य प्रदेश में पाया जाता है। इसको अन्य नामों जैसे मिस्वाक, खर्जल या झनक के नाम से भी जाना जाता है। अधिकांश औषधीय पौधों की तरह इस पर भी सामूहिक विलुप्ति का खतरा मंडरा रहा है और अगर अभी तत्काल कदम नहीं उठाए गए तो शायद निकट भविष्य में इसका अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा। यह समीक्षा किसानो को पीलू के महत्व और उत्पादन की तकनीक को समझाने का हमारा एक प्रयास है।

çtkfr;k

साल्वाडोरा उष्णकटिबंधीय अफ्रीका और एशिया में वितरित सदाबहार पेड़ों या झाड़ियों का एक छोटा जीनस है। साल्वाडोरा की दो प्रजातियां, भारत में व्यापक रूप से वितरित हैं साल्वाडोरा ओलियोइड्स और साल्वाडोरा पर्सिका ।

vk"kèkh; mi;kx

पीलू का सदियों से लोक चिकित्सा में एक लंबा इतिहास रहा है। परंपरागत रूप से, पीलू के कई हिस्सों के कच्चे अर्क का सदियों से कई बीमारियों के उपचार में उपयोग किया जाता रहा है। कई औषधीय गतिविधियों का प्रयोगात्मक मूल्यांकन से इसमें रोगाणुरोधी, कृमिनाशक, दर्दनिवारक, सूजन–रोधी, अल्सर–रोधी, एंटीऑक्सीडेंट, मिर्गी–रोधी, मधुमेह–रोधी, हाइपोलिपिडेमिक (रक्त वसा घटाने वाला), इसके अलावा घाव भरने वाला, अवसादरोधी, और ट्यूमर–रोधी आदि गुण होने की पुष्टि की गयी हैं। खांसी, अस्थमा, स्कर्वी, बवासीर, गठिया, कुष्ठ रोग, कैंसर, गोनोरिया, सिरदर्द और अन्य बीमारियों को ठीक करने में इसका प्रयोग किया जाता है। यह दांतों को साफ़ करने में, सुरक्षात्मक कोटिंग के रूप में और दांतों की सड़न की समस्या में भी काम आता है। एक स्विस फार्मास्युटिकल कंपनी ने मिस्वाक पर शोध किया और निष्कर्ष निकाला कि इसमें मुंह मे उपस्थित बैक्टीरिया के खिलाफ सक्रिय रसायन होते हैं जो रोगजनकों को मारते हैं और मसूड़े की सूजन को खत्म कर देते हैं। पौधे के लगभग हर हिस्से का उपयोग मानव रोगों के इलाज के लिए किया जाता है। इसके बीजों के तेल का उपयोग जोड़ों के दर्द, पोलियो, बवासीर और गोरोरिया के उपचार में किया जाता है। तेल का उपयोग पेट के कीड़ों को मारने के लिए भी किया जाता है और पित्ताशय को ठीक करने में भी मदद करता है। पत्तियों का उपयोग सिरदर्द, जोड़ों के दर्द, कुष्ठ रोग, मुंह में खुजली और मसूड़ों की समस्याओं, फोड़े या अल्सर के इलाज के लिए किया जाता है। पत्तियों में कैंसर रोधी गुण भी होते हैं और माउथ वाश के रूप में भी इसका बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। पत्तियां खुले घावों के उपचार में उपयोग की जाती हैं और रक्त शोधक और शीतलन एजेंट के रूप में कार्य करती हैं। तने का उपयोग बुखार, दमा, खांसी, कुष्ठ रोग, गठिया और मूत्रवर्धक गुणों के साथ कृमिनाशक गुणों के इलाज के लिए किया जाता है। जड़ें छाती और दांतों के रोग के खिलाफ प्रभावी हैं।

vk|kfxd vkj okf.kfT;d mi;kx

पोषण दृष्टि से महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से इसकी लाल–फलित किस्म में अधिक एंटीऑक्सीडेंट होता है, जिसका औद्योगिक उपयोगों में अहम योगदान है। इस पेड़ के बीजों से 40–50 प्रतिशत गैर खाद्य वसा वाले लिपिड अर्क प्राप्त होते हैं, जो औद्योगिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इसके फलों का उपयोग जूस और पेय पदार्थों के उत्पादन में भी किया जाता है।

पीलू के तेल का उपयोग साबुन और मोमबत्तियाँ बनाने में किया जाता है। बीज में वसा अम्ल (लॉरिक अम्ल –2 प्रतिशत मिरिस्टिक अम्ल – 44 प्रतिशत पाल्मेटिक अम्ल –20 प्रतिशत और ओलिक अम्ल–5 प्रतिशत होता है जो एक उत्कृष्ट साबुन बनाता है। पीलू का टूथ पेस्ट में बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है।

vU; mi;kx

इसके पत्ते और फल हरी सब्जियों या सलाद के रूप में खाए जाते थे। इसकी राल का उपयोग वार्निश निर्माण में किया जाता है। इसके अलावा, पत्ते कई जानवरों

जैसे गाय, ऊंट, बकरी, और भेड़ के लिए पोषक तत्व के रूप में उपयोगी है, यह गायों की दुग्ध उत्पादन क्षमता को बढ़ाने और जानवरों के सामान्य शरीर वजन में वृद्धि करने में सहायक है। यह भी बताया गया है कि पीलू से प्राप्त शहद में औषधीय गुण होते हैं ।

okuLifrd fooj.k

यह भारत का देशज एक बहुवर्षीय सदाबहार झाड़ी या छोटा पेड़ है, क्योंकि इसकी ऊँचाई 10 मीटर तक हो सकती है, और इसका व्यास तीन फीट तक होता है। मुख्य तना एक फुट से अधिक मोटा होता है, जो सीधा या फैलने वाला हो सकता है, और इसमें बहुत अधिक लटकती और फैलती शाखाएँ होती हैं। युवा शाखाएँ हरी होती हैं। मुख्य तने की छाल थोड़ी खुरदुरी और धूसर–भूरी होती है, जबकि अन्य स्थानों पर हल्की दिखाई देती है।

इसके फूल बिना डंठल के और हरे श्वेत रंग के होते हैं, जो शीर्ष या कांखीय पुष्पक्रम के रूप में उगते हैं। फूल पौधे पर सितंबर–अक्टूबर में फूल आते हैं। इसके फल गोलाकार, सुगंधित और पके होने पर पीले रंग के होते हैं। फल शरद ऋतु में बनते हैं और आकार में वृद्धि और अप्रैल–मई के दौरान परिपक्वव होने में 3 महीने लगते हैं।

t yok; vkj feêh

यह एक अत्यंत सूखा–सहिष्णु पौधा है जो की अधिकतम तापमान 50 डिग्री सेल्सियस और न्यूनतम 4 डिग्री सेल्सियस तक सहन कर सकता है। 180 और 700 मिमी के बीच वर्षा इसके लिए उपयुक्त है। यह बहुत शुष्क वातावरण, जहां औसत आर्द्रता 40–42 प्रतिशत हो या अत्यधिक खारी मिट्टी और उच्च तापमान के साथ कम नमी में अच्छी तरह से बढ़ता है। यह मध्यम और ठीक बनावट वाली मिट्टी, विशेष रूप से रेतीली दोमट, रेतीली मिट्टी दोमट और अच्छी गहराई की मिट्टी को पसंद करता है।

çoèku

प्राकृतिक परिस्थितियों में पेड़ जड़ प्ररोह और प्राकृतिक लेयरिंग द्वारा मुक्त रूप से पुनःत्पन्न होता है। हालांकि, बीज व्यवहार्यता (वायब्लिटी) केवल 30 प्रतिशत होती है, लेकिन बीज आसानी से अंकुरित हो जाता है। प्राकृतिक परिस्थितियों में बीजों का अंकुरण बरसात के मौसम (जुलाई और अगस्त) में होता है। बीजों में कोई निष्क्रियता नहीं होती है, लेकिन फलों के गूदे में अंकुरण अवरोधक होते हैं जिन्हें बोने से पहले हटा दिया जाना चाहिए और पीलू के भिगोए हुए और गूदे वाले बीज 24 घंटे में अंकुरित हो जाते हैं। नर्सरी परिस्थितियों में जून के दौरान 10–20 सेमी गहराई पर प्रति पॉलीबैग में दो बीज बोए जाते हैं। चूंकि, पीलू एक पर–परागित प्रजाति है, बीज मातृ पौधे के समान पौधे उत्पादित नहीं करते हैं। इसमें वानस्पतिक प्रसार एक अच्छा विकल्प नहीं है क्योंकि तना कलम जड़ पैदा करने में विफल रहती हैं।

Hkfe dh r;kjh vkj mojd dk ç;kx

भूमि की पहली जुताई जून के पहले सप्ताह में की जाती है, और 20–24 दिनों के लिए परती छोड़ दी जाती है। इसके बाद दूसरी जुताई की जाती है और पाटा लगाकर खेत को समतल कर दिया जाता है। फसल को 30 नत्रजन किग्रा, फास्फोरस 20 किग्रा, पोटाश 15 किग्रा प्रति हेक्टेयर दिया जाता है। पहले नत्रजन की आधी मात्रा और फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा को दिया जाता है और बाकी नत्रजन 120 दिनों के बाद दिया जाता है।

jkikÃ vkj njh

खेत में 5 × 5 मीटर की दूरी पर एक हेक्टेयर क्षेत्र में रोपण के लिए 15 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। जो 6800 रुपये प्रति हेक्टेयर की लागत से 2 साल बाद लगभग 200 किलोग्राम जड़ों की उपज देती है।

vUr% 'kL; fØ;k,

बरसात के मौसम में हर 20 दिनों के बाद और 3.4 साल की उम्र तक 45 दिनों के अंतराल पर हाथों से निराई गुड़ाई की जाती है।

Qly dh ifjiDork vkj dVkÃ

फल, फूल लगने के 4–5 महीने के बाद दिसंबर से अप्रैल–मई तक परिपक्वव हो जाते हैं। सम्पूर्ण पौधे का औषधीय रूप से उपयोग किया जाता है। लेकिन मेस्वाक टूथपेस्ट बनाने के लिए जड़ों का उपयोग किया जाता है। जड़ उत्पादन के लिए वर्ष के किसी भी समय 2 साल की वृद्धि के बाद पौधे को उखाड़ कर जड़ों को अलग करके सुखाया जाता है।

mit

एक हेक्टेयर क्षेत्र में 5 × 5 मीटर की दूरी पर फसल लगाने से दो साल बाद 200 किलोग्राम जड़ें प्राप्त होती है। पीलू का वार्षिक बीज उत्पादन लगभग 47,000 टन आंका गया है, जिसमें 15,000 टन तेल उत्पादन की क्षमता होती है।

dVkÃ mijkr çcèku

जड़ से उखाड़े गए पूरे पौधे को स्टेनलेस छुरी की मदद से पत्ती, तने और जड़ों में अलग किया जाता है। तने की शाखाओं और जड़ों का ताजा उपयोग किया जाता है। यदि इनका ताजा उपयोग नहीं किया जाता है, तो इन्हें अच्छी तरह हवादार छायादार स्थानों पर संग्रहित किया

जाना चाहिए।

jkx vkj dhV fu;=.k

इस फसल में कोई गंभीर कीट और निमेटोड नहीं देखे गए है।

fu"d"k

पीलू शुष्क क्षेत्र का एक बड़ा झाड़ीदार या छोटा पेड़ है जो उच्च नमक तनाव की स्थिति में भी अच्छी तरह से पनपता है। इसके तनों का उपयोग भारत के ग्रामीण भागों में दाँतों को साफ करने के लिए किया जाता है। इसके अलावा, पेड़ों की अक्सर जड़ों के लिए खेती की जाती है क्योंकि मेस्वाक टूथ पेस्ट की तैयारी में इसका बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। पेड़ के कई औषधीय लाभ हैं जिनके बारे में इस लेख में विस्तार से चर्चा की गई है।

ihyw dk Qy

सघन बागवानी समय की मांग

ukjk;.k yky[1]] fu'kk lkg[1]] lthc dekj cgjk[1] ,o ,-d- oek[2]

[1]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल, मध्य प्रदेश

[2]भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ की 70–75 प्रतिशत आबादी गावों में निवास करती है जिनका मुख्य व्सवसाय कृषि है। पारम्परिक खेती में धान, गेहू, सरसों, गन्ना, अरहर, चना इत्यादि का ही उत्पादन करते है परंतु उद्यानिकी फसलें विशेषकर फल पौधे धान्य फसलो की तुलना में अधिक उत्पादन देती हैं और पौष्टिक रूप से अधिक लाभकारी होती है। बढ़ती हुई जनसंख्या एवं खेत का सिकुड़ता हुआ आकार की वजह से प्रति व्यक्ति फल की आपूर्ति नही हो सकती। इसके लिए आवश्यक है कि सघन बागवानी लगाने पर जोर दिया जाए तो प्रति व्यक्ति फलों की उपलब्धता बढ़ सकती है और किसानों को आत्मनिर्भर बनाने में यह तकनीक उपयोगी साबित हो सकती है।

फल उत्पादन में हमारा देशविश्व में दूसरे स्थान पर है। फल उत्पादन के माध्यम से लोगों के स्वास्थ्य, समृद्धि और सामान्य जीवन में खुशहाली लायी जा सकती है। भारत में फल उत्पादन हेतु विभिन्न प्रकार की जलवायु उपलब्ध है जिसमें विभिन्न प्रकार के फल को उगाया जा सकता है। जनसंख्या वृद्धि के साथ प्रति व्यक्ति फलों की उपलब्धता अन्य देशों की तुलना में काफी कम है जिसकी पूर्ति हम सघन बागवानी अपनाकर कर सकते है। सघन बागवानी का मतलब है एक निश्चित क्षेत्रफल में आधुनिक प्रबंधन के माध्यम से अधिक से अधिक पौधों को शामिल करते हुये प्रति इकाई क्षेत्रफल के द्वारा गुणवत्तायुक्त अधिक उत्पादन प्राप्त करना। सघन बागवानी के अन्तर्गत प्रति हेक्टेयर पौधों की संख्या कितना आएगी कुछ फलों में नीचे तालिका 1 को यदि देखा जाए तो पौधों की संख्या सघन बागवानी में दो से चार गुना बढ़ रही है। इसमें एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में यदि पौधे को शुरू से ट्रेनिंग, फ्रेमिंग, प्रुनिंग अपनाया जाए तो गुणवत्तायुक्त उत्पादन कई गुना अधिक प्राप्त किया जा सकता है।

वर्तमान में भारत में इस पद्धति का प्रयोग प्रायः सेब, केला, पपीता, अनार, नीबू, वर्गीय फल, अमरूद, लीची, आम, नाशपाती, अनान्नास आदि में किया जा रहा है। सघन बागवानी से फलों के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है जिससे अपने देश के कुपोषण को दूर करने एवं प्रति व्यक्ति फलों को उपलब्ध कराया जा सकता है। सघन बागवानी में गुणवत्तायुक्त उत्पादन होता है क्योंकि छोटे पौधे में बागवानी क्रियाएं बडी आसानी से की जा सकती है।

ckuh fdLek dk pquko%&

सघन बागवानी लगाने के लिए केवल बौनी किस्मों का ही चुनाव करें ताकि आगे चलकर ज्यादा कँटाई–छँटाई की जरूरत न हो और शाखायें आपस में उलझे न ज्यादा कटाई करने में पौधो के स्वास्थ्य पर भी प्रभाव पडता है। नीचे तालिका 1 में कुछ फल वृक्ष की बौनी किस्म व वृक्ष सघनता दिया गया है।

rkfydk 1% l?ku ckxokuh d fy, ckuk fdLe o o{k l?kurk

फलदार वक्षृ	परंपरागत दूरी (मी.)	वृक्ष सघनता/हे.	सघन बागवानी की दूरी (मी.)	वृक्ष सघनता/हे.	सघन बागवानी के लिए उपयक्तु किस्में
केला	2 x 2 1.5 x 1.5	2500 44	1.2x 1.2	6944	ड्वार्फ केवेन्डिश, बसराई ड्वार्फ
अमरूद	8 x 8 6 x 6	227 227	2x2 3x3	2500 1111	लखनऊ 49, अलाहाबाद सफेदा, हरिझा, अर्का मृदुला
आम	10 x 10	100	5x5 2.5x2.5	400 1600	आम्रपाली,पूसा अरूनिमा

फलदार वृक्ष	परंपरागत दूरी (मी.)	वृक्ष सघनता/हे.	सघन बागवानी की दूरी (मी.)	वृक्ष सघनता/हे.	सघन बागवानी के लिए उपयुक्त किस्में
सेब	7 x 7 4 x 4	204625	2x1	5000	रेडचीफ, रेडस्पर, आरेगनस्पर, गोल्डस्पर, सिल्वरस्पर, स्टार क्रिमसन स्पर
नींबू	6 x 6	277	3x1.5	2222	कागजी नींबू
अनार	4 x 4	625	1.5 x 1.5	4444	गणेश
पपीता	1.8 x 1.8	3086	1.25x1.25	6400	पूसा नन्हा, पूसा ड्वार्फ, सी. ओ.
अनानाश	0.25 x 0.60 x 0.90	74074	0.20 x 0.45 x 0.75	148148	क्वीन, क्यू
लीची	10 x 10	100	5 x 5	400	बेदाना, गण्डकी योगिता
चीकू	8 x 8	277	4 x 4	625	पी.के.एम.1, पी.के.एम.2

eyo`rk dk pquko%&

किसी भी फल के लिए सघन बागवानी को सफल बनाने के लिए छोटे कद वाले बौने मूलवृंतों का चुनाव बहुत आवश्यक होता है। इनसे फसल जल्दी तैयार हो जाती है। मूलवृंत सांकुर डाली को ज्यादा बढने नही देता जिससे पौधो का आकार छोटा रह जाता है और कम जगह में भी अधिक पौधा लगाया जा सकता है। कुछ फलो का बौना मूलवृंत नीचे तालिका 2 में दिया गया है।

rkfydk 2% l?ku ckxokuh ds fy, ckSuk eyo`r

Qynkj o`{k	ckSuk eyo`r
सेब	एम–9, एम–26, एम–27, पी– 22, ओटावा–3
बेर	जीजीफस रोटण्डीफोलिया
चेरी	कोल्ट, चार्जर, रूबिका
अमरूद	पूसा (अपूपलेक–82), सिडियम पुमिलस) सिडियम फ्रिंडीचेस्थेलिनियस
नाशपाती	ई एम क्वाइन्स ए और सी ई एम
नींबू	थामसवीले, फेरोनिआ, सेवेरीनिया

l?ku ckxokuh ds ykHk

- अधिक पौधो का समावेश के कारण उत्पादकता बढती जाती है।
- पौधा छोटा होने के कारण बाग प्रबंधन आसानी से हो जाता है।
- फल का उत्पादन जल्दी शुरू हो जाता है।
- उपलब्ध समस्त संसाधनों का समुचित उपयोग होता है।
- प्रकाश का समुचित उपयोग होता है जिससे प्रकाश संश्लेषण अधिक होता है और उत्पादन ज्यादा मिलता है।
- फलो की गुणवत्ता में वृद्वि होती है।
- बौने पौधे होने के कारण कँटाई–छँटाई व फलों की तुड़ाई करने में आसानी होती है।

l?ku ckxokuh ls uqdlku

- ज्यादा सूर्य प्रकाश पडने पर फलो में जलन एंव फटन हो सकती है। उदाहरण के लिए लीची और अन्नानास में ज्यादा देखा गया है।
- उचित देखभाल के अभाव में फलो में आकार एंव रंग में कमी हो जाती है।
- बाग लगाने के लिए शुरूआती समय में अधिक धन की आवष्यकता होती है।
- पौधा लगाने के कुछ सालो बाद पौधो की शाखायें एंव जड़े आपस में जुडने लगती है एंव जड़े आपस में उलझ

सकती है।

- पौधो की फैलाव को रोकने के लिए ज्यादा कँटाई–छँटाई करने से पौधो में रोगो एंव कीट व्याधियां का खतरा बढ जाता हैं।
- अमरूद में फलो की शर्करा कम व अम्लता बढ जाती हैं।
- पौधो का जीवनकाल कम हो जाता हैं।

l ?ku ckxokuh gsrq è;ku j[kus ;ksX; ckrsa

- ऐसी किस्मों मूलवृंतों का चुनाव करना चाहिए जो बौनी प्रकृति की न हो।
- ऐसी फल व किस्मों का चयन करना चाहिए जो धीरे–धीरे विकास करता हो।
- किस्में जल्दी फल एवं अधिक उत्पादन वाली होना चाहिए।
- फल वृक्ष व किस्मों का चयन मृदा व जलवायु अनुकूलता के अनुसार करना चाहिए।
- समय–समय फल वृक्षो की प्रवृत्ति के अनुसार कँटाई–छँटाई करना चाहिए। ताकि ऊँचाई को नियंत्रित किया जा सके।
- फल पौध का चुनाव करना चाहिए जो सीधी बढती हो।
- पौधों को उचित आकार देने के लिए शुरूसे संधाई करना चाहिए।
- उचित रोपण पद्धति में पौधो को लगाना चाहिए ताकि अधिक समय तक उत्पादन लिया जा सके।
- पौधो की वृध्दि को नियंत्रित कर बौनापन बनाये रखने के लिए पादप वृध्दि का उपयोग किया जा सकता है। जैसेः .साइकोसेल, फासफोन–डी, क्लोरामक्वाह, पैक्लोब्यूटाजोल
- सघन बागवानी में आधुनिक तकनीकी जैसेः बूंद–बूंद सिंचाई व पलवार आदि का उपयोग कर गुणवत्तायुक्त उत्पादन लिया जा सकता है।
- बाग की स्थापना वैज्ञानिक तरीके से करना चाहिए।
- पौधो की वृध्दि के अनुसार वर्ष में एक–दो बार कँटाई–छँटाई करना चाहिए ताकि पौधा बौना ही बना रहे।
- सघन बागवानी के लिए तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है इसके लिए नजदीकी कृषि अनुसंधान संस्थान या कृषि कार्यालय के सम्पर्क में आकार प्रशिक्षण अवश्य ले।

हिन्दी के विरोध का कोई भी आन्दोलन राष्ट्र की प्रगति में बाधक है। हिन्दी जबकि राष्ट्रीय एकता की ओर अग्रसर होने में एक कदम है, उसका विरोध करना अकारण होगा। यह अन्तःप्रान्तीय कार्य का एक माध्यम स्वरूप होगी और भारतीय एकता को एक सूत्र में बांध रखने में सहायक होगी।

–नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

ड्रैगन फ्रूटः भविष्य का सुपरफूड

ftrUæ x|tj[1] ftrUæ Çlg[2] jktæ Çlg jkBkj[1] ,o jked'k eh.kk[3]

[1]उधान विज्ञान, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[2]उधान विज्ञान, कॉलेज ऑफ हॉर्टिकल्चर एंड फॉरेस्ट्री, झालावाड़
[3]भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

ifjp;

ड्रैगन फ्रूट, जिसे पिताया कहा जाता है, एक उष्णकटिबंधीय फल है जो अपने अनोखे रंग, स्वाद और पोषण मूल्यों के कारण लोकप्रिय हो रहा है। यह मुख्य रूप से कैक्टस परिवार से संबंधित होता है और इसका वैज्ञानिक नाम हाइलोसेरेस अनडेटस है। यह मूल रूप से मध्य और दक्षिण अमेरिका से उत्पन्न हुआ। भारत में इसे कमलम फल के नाम से भी जाना जाता है (जैसा कि भारत के माननीय प्रधानमंत्री ने 26 जुलाई 2020 को अपने 'मन की बात' कार्यक्रम में उल्लेख किया था)। इस फल को ''ड्रैगन फ्रूट'' कहा जाता है क्योंकि इसमें ड्रैगन जैसी हरी शल्कें होती हैं और इसका आकर्षक लाल गुलाबी रंग अग्नि का प्रतीक माना जाता है। भारत में इसे 1990 के दशक की शुरुआत में पेश किया गया था, और तब से इस फसल के तहत खेती का क्षेत्र लगातार बढ़ता गया। अन्य देशों में इसे विभिन्न नामों से भी जाना जाता है, जैसे ''नोबल वुमन'', ''क्वीन ऑफ द नाइट'', ''स्ट्रॉबेरी पीयर'' (मॉर्टन जे, 1987) और ''जीसस इन द क्रैडल''। इस फल की खेती मुख्य रूप से वियतनाम, थाईलैंड, मलेशिया, मैक्सिको, और भारत जैसे देशों में की जाती है। भारत में, यह राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में उगाया जाता है।

ik"k.k eY; vkj LokLF; ykHk

ड्रैगन फ्रूट एक सुपरफूड माना जाता है क्योंकि यह कई पोषक तत्वों से भरपूर होता है। इसमें विटामिन सी, विटामिन बी, आयरन, कैल्शियम, फाइबर और एंटीऑक्सिडेंट्स प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसके कुछ मुख्य स्वास्थ्य लाभ निम्नलिखित हैंः

çfrj{kk r= dk etcr djrk g– इसमें मौजूद विटामिन सी और एंटीऑक्सिडेंट्स शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं।

ân; LokLF; d fy, ykHkdkjh– यह कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित करता है और हृदय को स्वस्थ रखने में मदद करता है।

ikpu r= d fy, mÙke– इसमें भरपूर फाइबर होता है, जिससे पाचन क्रिया में सुधार होता है और कब्ज की समस्या दूर होती है।

Ropk vkj ckyk d fy, Qk;nen– इसमें एंटीऑक्सिडेंट्स होते हैं, जो त्वचा की चमक बढ़ाने और बालों को मजबूत करने में सहायक होते हैं।

eèkeg jkfx;k d fy, mi;kxh– यह रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करता है।

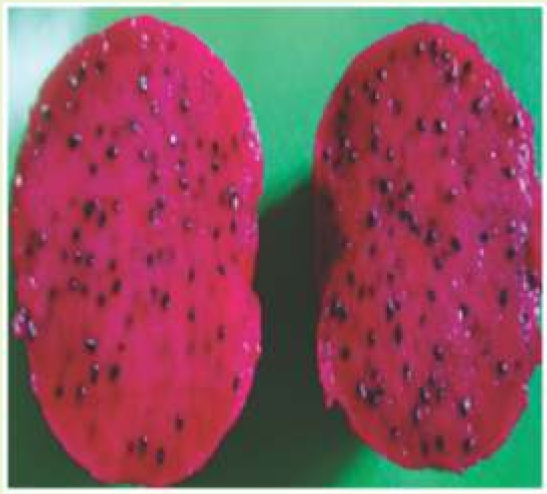

0;kolkf;d [krh vkj lHkkouk,

ड्रैगन फ्रूट की मांग बाजार में तेजी से बढ़ रही है, जिससे यह एक लाभदायक फसल साबित हो रही है। इसके फल का उपयोग ताजे खाने के अलावा जूस, जैम, आइसक्रीम और सौंदर्य उत्पादों में भी किया जाता है। भारत में इसकी खेती करने वाले किसानों को प्रति हेक्टेयर लाखों रुपये की आमदनी हो सकती है।

enk ,o tyok;q vko';drk,

- मिट्टी अच्छी जल निकासी वाली, जैविक पदार्थों से समृद्ध और ढीली होनी चाहिए, ताकि रेशेदार जड़ें आसानी से प्रवेश कर सकें।
- उपयुक्त तापमानः 20–30 डिग्री सेण्टीग्रेड
- यदि दिन का तापमान 40 डिग्री सेण्टीग्रेड से अधिक हो जाता है, तो पत्तियां झुलस सकती हैं। झुलसन से बचाने के लिए 20–30 प्रतिशत छाया बनाए रखना आवश्यक है।

- मिट्टी का pH 5.5-6.6 के बीच होना चाहिए।

vUrjorh; Qly dk egRo

vUrjorh; Qly अपनाने से खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है और दलहनी फसलें मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाती हैं, जिससे किसानों की आय में भी वृद्धि होती है। अनुशंसित अंतरफसलें: मिर्च, लोबिया, टमाटर, मसूर, चना आदि।

çoèku fofèk

- यह मुख्य रूप से एक वर्ष पुरानी कटिंग्स द्वारा उगाया जाता है।
- कटिंग्स को सितंबर–अक्टूबर में लिया जाता है और 25–30 सेमी लंबी होनी चाहिए।
- जड़ों के बेहतर विकास के लिए कटिंग्स को इंडोल.3. ब्यूटिरिक एसिड/2.5ppm (रूटिंग हार्मोन) में डुबोकर पॉलीबैग (12×30 सेमी) में लगाया जाता है।
- जैविक विधियों में एलोवेरा जेल का उपयोग रूटिंग हार्मोन के रूप में किया जा सकता है।
- मीडिया: पॉलीबैग में लगाने से पहले वर्मीकम्पोस्ट और कोकोपीट (1:2) का मिश्रण उपयोग किया जाता है।

Mªxu ÝwV dk ikèkkjki.k

ड्रैगन फ्रूट एक कैक्टस प्रजाति का पौधा है जो कम पानी और सूखे वातावरण में भी अच्छी तरह विकसित हो सकता है। इसकी खेती के लिए अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है। इसे लगाने के लिए कटिंग या बीज विधि का उपयोग किया जाता है, लेकिन वानस्पतिक विधि (कटिंग) से इसे जल्दी और बेहतर तरीके से उगाया जा सकता है। ड्रैगन फ्रूट का पौधा मुख्य रूप से खंभों या ट्रेलिस की सहायता से बढ़ाया जाता है, जिससे इसे सहारा मिलता है और फलन अधिक होता है। इसके लिए 10 –12 फीट की दूरी पर पौधे लगाए जाते हैं।

tyok; ,oa çlpkÃ

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए गर्म और शुष्क जलवायु सबसे अच्छी मानी जाती है। यह पौधा अधिक ठंड सहन नहीं कर सकता, इसलिए 10 डिग्री सेण्टीग्रेड से कम तापमान वाले क्षेत्रों में इसकी खेती कम होती है। इसकी सिंचाई गर्मी के मौसम में 10–15 दिन के अंतराल पर और सर्दियों में महीने में एक बार करनी चाहिए। अधिक जलभराव से इसकी जड़ें सड़ सकती हैं।

[kkn ,oa moZjd çcèku

ड्रैगन फ्रूट की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए जैविक और रासायनिक खाद दोनों का प्रयोग किया जा सकता है। प्रति पौधा 10–15 किलो गोबर की खाद प्रति वर्ष देना चाहिए।

çf'k{k.k vkSj NVkÃ

- यह बेल वाली फसल है, जो 4–5 मीटर लंबी हो सकती है।
- पौधे को सहारा देने के लिए कंक्रीट पिलर (6 फीट ऊँचा) और डिस्कार्डेड टायर का उपयोग किया जाता है।
- छंटाई अक्टूबर–नवंबर में की जाती है, जिससे फसल का उत्पादन बढ़ता है।

Qy vkSj Qyu

ड्रैगन फ्रूट का पौधा 8–12 महीनों में फूल देना शुरू कर देता है। इसके फूल सफेद रंग के होते हैं और रात में खिलते हैं, जिन्हें ''नाइट ब्लूमिंग सेरेसस'' भी कहा जाता है। इन फूलों का परागण प्राकृतिक रूप से मधुमक्खियों और पतंगों के माध्यम से होता है, लेकिन अच्छी उपज के लिए कृत्रिम परागण भी किया जाता है। फूल आने के 30–50 दिनों के भीतर फल परिपक्व हो जाते हैं।

çtkfr;k vkj fdLe

ड्रैगन फ्रूट की मुख्य 4 प्रजातियाँ होती हैं:

- हाइलोसेरेस अनडेटस – लाल छिलका और सफेद गूदा
- हाइलोसेरेस कोस्टारिसेन्सिस – लाल छिलका और गहरा लाल गूदा
- सेलेनीसेरेस मेगालैंथस – पीला छिलका और सफेद गूदा
- हाइलोसेरियस स्परपुसीआई – लाल छिलका और लाल गूदा

ykdfç; fdLe

ऑस्ट्रेलियन रेड, ताइवान पिंक, थाई रेड, वियतनामी व्हाइट, कोरियन व्हाइट आदि।

dVkÃ ,o HkMkj.k

- फल सितंबर–अक्टूबर में परिपक्व होते हैं।
- कटाई के समय छिलके का रंग हरा से लाल–गुलाबी में बदल जाता है।
- प्रति फल औसतन 300–400 ग्राम वजन होता है।
- 10 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भंडारण करने से शेल्फ लाइफ बढ़ती है।
- इसे कार्डबोर्ड या पननेट बॉक्स में पैक किया जाता है।
- मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे जैम, जूस, स्क्वैश और प्राकृतिक रंग भी तैयार किए जा सकते हैं।

fu"d"k

ड्रैगन फ्रूट एक पोषण से भरपूर, कम पानी में उगने वाला और व्यावसायिक रूप से लाभदायक फल है। इसकी खेती से न केवल किसानों को अधिक मुनाफा मिलता है, बल्कि यह स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत लाभकारी है। सही तकनीकों और प्रबंधन से ड्रैगन फ्रूट की खेती को सफल बनाया जा सकता है, जिससे यह भविष्य की एक प्रमुख फसल बन सकती है।

लोकतन्त्र हिन्दी के बिना चल नहीं सकता और यदि चलता है तो झूठा है।

– जैनेन्द्र कुमार

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि हिन्दी के बिना हमारा काम नहीं चल सकता।

– बंकिमचन्द्र चटोपाध्याय

हिन्दी का श्रृंगार राष्ट्र के सभी भागों के लोगों ने किया है, वह हमारी राष्ट्रभाषा है।

– चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

दमस्क गुलाब की खेती : एक सम्पूर्ण गाइड

vukfedk l toku[1]] 'khry jkor[2] ,o gÆ"krk ckjk[3]

[1,3]गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड
[2]भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

दमस्क गुलाब एक सजावटी और सुगंधित पौधा है, यह रोज़ेसी परिवार की सबसे महत्वपूर्ण प्रजातियों में से एक है, यह अपने उत्कृष्ट आवश्यक तेल के लिए विश्व भर में जाना जाता है एवं इसका उपयोग खाद्य, औषधीय और सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में भी होता है। भौगोलिक और ऐतिहासिक रूप से, यह माना जाता है कि दमस्क गुलाब की उत्पत्ति प्राचीन फारस (वर्तमान में ईरान) में हुई थी, और फिर यह यूरोपीय देशों और उत्तरी अफ्रीका तक फैला। 16वीं शताब्दी में, उस्मानी साम्राज्य के विस्तार के बाद, दमस्क गुलाब को सबसे पहले यूरोप में बड़े पैमाने पर गुलाब के तेल के उत्पादन के लिए बुल्गारिया और तुर्की में उगाया गया। अपने वाणिज्यिक उत्पादों जैसे गुलाब का तेल, गुलाब जल, गुलाब कंक्रीट और गुलाब एब्सोल्यूट के अलावा, यह विभिन्न जैव–रासायनिक गतिविधियों जैसे दर्द निवारक, हाइपोटोनिक, और ऐंठनरोधी गुणों का भी धनी है।

विश्व में इसे ईरान, बुल्गारिया, तुर्की, भारत, मोरक्को, चीन, दक्षिणी फ्रांस, दक्षिणी इटली, रूस, लीबिया और यूक्रेन देशों में उगाया जाता है। भारत में, यह राजस्थान, उत्तर प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के कुछ क्षेत्रों में 2500–3000 हेक्टेयर भूमि पर उगाया जाता है, जिससे हर साल 0.2 मीट्रिक टन गुलाब का आवश्यक तेल (सुगंधित तेल) उत्पन्न होता है। दमस्क गुलाब का तेल, जिसे "अत्तर" या "ओट्टो" के रूप में भी जाना जाता है, एक अत्यंत मूल्यवान उत्पाद है जिसे अक्सर "तरल सोना" कहा जाता है।

वैश्विक स्तर पर हर साल 45 टन कंक्रीट, एब्सोल्यूट और दमस्क गुलाब के तेल की आवश्यकता होती है, लेकिन वैश्विक स्तर पर गुलाब के तेल का उत्पादन कुल मांग का लगभग आधा है। बुल्गारिया और तुर्की दुनिया के अग्रणी गुलाब तेल उत्पादक हैं, जो विश्व उत्पादन का 80–90: हिस्सा बनाते हैं। गुलाब के तेल की गुणवत्ता को कई कारक प्रभावित करते हैं,जिनमें जीनोटाइप, मौसमी परिस्थितियाँ, प्रचार विधि, छंटाई का स्तर, फूल तोड़ने का समय और तरीका, आसवन विधि और फूलों के भंडारण की अवधि शामिल हैं।

okuLifrd fooj.k

यह एक बहुवर्षीय झाड़ी है, जिसमें ज़मीन के ऊपर कई शाखाएँ और गहराई तक फैली जड़ प्रणाली होती है। यह लंबी (1–2 मीटर) पर्णपाती झाड़ी कठोर कांटों और मुड़ी हुई नुकीली टहनियों से युक्त होती है, और इसकी तने मोटे होते हैं। इसके पत्ते संयुक्त (पिननेट) होते हैं, जिनमें पाँच से सात पत्तियाँ होती हैं। इसके फूल छोटे गुच्छों में उगते हैं व फूलों का रंग हल्के लाल से लेकर मध्यम गुलाबी तक होता है। यह समुद्र तल से 300 से 3500 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है। इसकी आयु 10–15 साल होती है और वाणिज्यिक उत्पादन के लिए तीन साल का गर्भकाल आवश्यक होता है। पश्चिमी गोलार्ध के अधिकांश हिस्सों में इसका उपयोग एक सजावटी पौधे के रूप में भी किया जाता है।

vkÆFkd egRo

दमस्क गुलाब से बनने वाले सबसे मूल्यवान उत्पादों में आवश्यक तेल, गुलाब जल, गुलाब एब्सोल्यूट और कंक्रीट शामिल हैं। गुलाब का तेल और पानी बनाने के लिए भाप आसवन (स्टीम डिस्टिलेशन) का उपयोग किया जाता है, जबकि गुलाब एब्सोल्यूट और कंक्रीट बनाने के लिए सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन का उपयोग किया जाता है। गुलाब के आवश्यक तेल की संरचना जटिल होती है, जिसमें 275 से अधिक सूक्ष्म तत्व और कुछ प्रमुख यौगिक होते हैं, जिनमें सिट्रोनेलोल, जेरानिओल, नेरोल, फिनएथिल अल्कोहल, लिनालूल, फार्नेसोल, यूजेनोल और यूजेनोल मिथाइल ईथर शामिल हैं। दो सूक्ष्म तत्व β–डामास्सिनोन और β–आयोनोन गुलाब के तेल की सुगंध के मुख्य घटक हैं। गुलाब के आवश्यक तेल का उपयोग विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों जैसे कि इत्र और सौंदर्य प्रसाधन, तंबाकू, शराब, मीठे खाद्य पदार्थ, पाक उद्योग और औषधीय क्षेत्र में किया जाता है। गुलाब के तेल का उपयोग चाय और शराब में स्वाद के

लिए, साथ ही साबुन और सौंदर्य प्रसाधनों में सुगंध के लिए किया जाता है। इसकी तीव्र सुगंध और हल्के जीवाणुरोधी गुणों के कारण इसे लोशन, साबुन और क्रीम में भी उपयोग किया जाता है।

इसके अलावा, दमस्क गुलाब में फेनोलिक्स, फ्लेवोनोइड्स, कैरोटेनोइड्स और एंथोसायनिन्स जैसे उच्च स्तर के एंटीऑक्सिडेंट होते हैं। पारंपरिक रूप से, दमस्क गुलाब के फॉर्मूलेशन का उपयोग कसैले (एस्ट्रिंजेंट), टॉनिक, हल्के रेचक और जीवाणुरोधी उपचार के रूप में किया गया है, जिनसे छाती में दर्द, कब्ज, अवसाद, जठरांत्र (गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल) समस्याएं, नेत्र रोग, सूजन, श्वसन समस्याएं और मासिक धर्म के दौरान रक्तस्राव जैसी समस्याओं का इलाज किया जाता है।

अजमेर के पुष्कर क्षेत्र और राजसमंद के हल्दी घाटी क्षेत्र के आसपास बड़ी संख्या में गुलाब की खेती की जाती है, और उनकी पंखुड़ियों का उपयोग सुगंध, इत्र, गुलाब जल और अन्य खाद्य उत्पादों के लिए किया जाता है। गुलाब के इत्र, गुलाब जल, गुलकंद और सूखी पंखुड़ियों के निर्यात के लिए यहां अत्यधिक संभावनाएं हैं।

feêh vkj tyok;

वाणिज्यिक गुलाब की खेती के लिए गहरी और उपजाऊ दोमट मिट्टी आदर्श होती है। फिर भी, उचित कृषि तकनीकों के साथ इसे विभिन्न प्रकार की मिट्टियों पर प्रभावी ढंग से उगाया जा सकता है। गुलाब की बेहतर वृद्धि के लिए 6.0 से 7.5 के पीएच वाली मिट्टी, जो मध्यम रूप से अम्लीय से लेकर मध्यम रूप से क्षारीय होती है, उपयुक्त मानी जाती है।

दमस्क गुलाब के लिए उच्च वायुमंडलीय आर्द्रता और मध्यम तापमान की आवश्यकता होती है। इन्हें आमतौर पर दिन में 20 से 30 डिग्री सेल्सियस और रात में 18 से 20 डिग्री सेल्सियस के बीच के तापमान पर उगाया जाता है। फूल आने की प्रक्रिया शुरू करने के लिए ठंडे तापमान की आवश्यकता (वर्नलाइज़ेशन) और छोटे दिनों की जरूरत होती है, और यह प्रक्रिया वसंत के अंत और शुरुआती गर्मियों में होती है। फूल आने के समय रात का तापमान 10–12 डिग्री सेल्सियस होने पर तेल संश्लेषण में काफी कमी आती है, जबकि 20 डिग्री सेल्सियस उससे अधिक तापमान तेल संश्लेषण को बढ़ावा देता है। वायुमंडलीय आर्द्रता का गुलाब की वृद्धि पर कम प्रभाव पड़ता है, हालांकि वसंत और शुरुआती गर्मियों में 70þ आर्द्रता अच्छी दमस्क गुलाब की फसल के लिए आदर्श मानी जाती है।

vu'kfl r fdLe

uljtgk यह किस्म उत्तर प्रदेश और इसके पड़ोसी उप–उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले राज्यों में उगाया जा सकता है। इस किस्म के तेल में उप–उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में 0.025–0.030 प्रतिशत और समशीतोष्ण क्षेत्रों में 0.035–0.040 तेल सामग्री होती है। नूरजहां किस्म के तेल में लगभग 30 प्रतिशत जेरानिओल, 24 प्रतिशत सिट्रोनेलोल, 12 प्रतिशत नेरोल और 1.3 प्रतिशत रोज ऑक्साइड होता है। यह सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिसिनल एंड एरोमेटिक प्लांट्स द्वारा विकसित उच्च गुणवत्ता किस्म है

jkuh lkfgck यह किस्म तीन महीनों में 40 क्विंटल/हेक्टेयर तक फूल देती है, जो इसे गुलाब जल उत्पादन के लिए आदर्श बनाती है। रिपोर्ट के अनुसार, इस किस्म के तेल में 35 प्रतिशत जेरानिओल, 7 प्रतिशत जेरानिल एसीटेट, 5 प्रतिशत सिट्रोनेलोल और 10 प्रतिशत ट्रांस–रोज ऑक्साइड होता है।

Tokyk यह किस्म आईएचबीटी द्वारा विकसित की गई है। इसे उत्तरी मैदानी क्षेत्रों, उप–उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों, निम्न पहाड़ी क्षेत्रों और मध्यम समशीतोष्ण जलवायु में 1200 मीटर की ऊँचाई तक उगाया जा सकता है। यह ओलावृष्टि, बारिश और तेज हवा के प्रति प्रतिरोधी होती है, और मार्च–अप्रैल में तथा फिर सितंबर महीने में फूल देती है। ज्वाला पौधे के फूल छोटे समूहों में घने गुच्छों में उत्पन्न होते हैं और प्रत्येक फूल का वजन 2.2 से 5.0 ग्राम के बीच होता है।

çoèku

दमस्क गुलाब को प्रवर्धित करने के लिए तीन विधियाँ प्रयोग की जाती हैं: ग्राफ्टिंग, कलिकायन और कलम (कटिंग) लगाना। गुलाब को बढ़ाने की सबसे सरल तकनीक कलम लगाना है। एक साल पुराने 5–6 कलियों वाले, 20–25 सेमी लंबे और 0.75–1.25 सेमी मोटे तनों से कलम बनाए जाते हैं। कटिंग लेने का सबसे अच्छा समय नवंबर से दिसंबर के बीच होता है। कलम लगाने के बाद, जड़ों के बनने में तीन महीने का समय लगता है और अंकुरित कलमों को परिपक्व अवस्था में पहुँचने में 9–12 महीने लगते हैं, जब उन्हें मुख्य खेत में स्थानांतरित किया जा सकता है।

jkiKÃ

गुलाब को खुले क्षेत्रों में उगाया जाता है जहाँ पर्याप्त धूप मिलती है। उप–उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में, भूमि की पूरी तैयारी अप्रैल महीने में की जाती है और गर्मियों के दौरान इसे खुला छोड़ दिया जाता है। खेत की तैयारी के दौरान प्रति हेक्टेयर 10–15 टन गोबर की खाद डाली जाती है। इसके बाद रोपण क्षेत्र को उपयुक्त आकार के बेड में ठीक से व्यवस्थित किया जाता है। गुलाब की रोपाई 0.45 घन मीटर गहरे गड्ढों में की जाती है, जो एक मीटर की दूरी पर होते हैं। जड़ वाले पौधों को जुलाई से अगस्त के बीच प्रत्यारोपित किया जा सकता है, लेकिन शरदकालीन रोपाई सबसे आदर्श होती है। एक हेक्टेयर भूमि में लगभग 10,000 पौधों की आवश्यकता होती है। पहले वर्ष में, प्रत्येक निराई के बाद, प्रत्येक पौधे के चारों ओर 4–5 सेमी मिट्टी जोड़ी जाती है।

ik"k.k çcèku

दमस्क गुलाब में बहुत अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। छंटाई के बाद, प्रति हेक्टेयर 15 से 20 टन गोबर की खाद (FYM) डाली जाती है और इसे मिट्टी के साथ अच्छी तरह मिला दिया जाता है। यह पाया गया है कि प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर 120 किलोग्राम नाइट्रोजन, 60 किलोग्राम पोटैशियम और 60 किलोग्राम फॉस्फोरस डालने से दमस्क गुलाब के फूलों की पैदावार बढ़ती है। लेकिन एनपीके की खुराक स्थान के अनुसार भिन्न होती है। नाइट्रोजन को दो बराबर खुराकों में दिया जाता है। आधी नाइट्रोजन छंटाई के समय दी जाती है और बाकी आधी 15 दिनों बाद डाली जाती है।

fujkÃ vkj xMkÃ

जब खेत में कटिंग लगाई जाती है, तब शुरुआती चरणों में दमस्क गुलाब खरपतवार से प्रतिस्पर्धा करने में कमजोर होता है। रोपण के बाद हर महीने कम से कम 2–3 बार निराई की आवश्यकता होती है। खरपतवारों की वृद्धि को रोकने के लिए हल्की गुड़ाई की जाती हैं। पहले वर्ष में कम से कम तीन गुड़ाई आवश्यक होती हैं, इसके बाद अगले वर्षों में छंटाई के बाद एक गहरी गुड़ाई की जाती है।

¸lpkÃ

शाकीय चरण और फूलों के लगने के दौरान पर्याप्त पानी की आवश्यकता होती है। दमस्क गुलाब के लिए प्रति वर्ष 10–12 सिंचाई की आवश्यक है। वर्षा ऋतु के दौरान पौधों को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन गर्मी के महीनों में हर सप्ताह और सर्दियों में हर दो सप्ताह में सिंचाई की जा सकती है।

NVkÃ

गुलाब के पौधों की छंटाई कृत्रिम शीतनिद्रा (dormancy) के लिए की जाती है। झाड़ियों के सही आकार को बनाए रखने और नई शाखाओं को प्रोत्साहित करने के लिए वार्षिक छंटाई आवश्यक होती है। छंटाई मिट्टी की सतह से 15 से 20 सेंटीमीटर की ऊँचाई पर की जाती है। पौधों के चारों ओर की मिट्टी को तुरंत हटाना चाहिए और 25–30 दिनों के लिए खुला छोड़ देना चाहिए। छंटाई के बाद पौधों को फूल आने में 70–90 दिन लगते हैं।

Qly dVkÃ vkj HkMkj.k

उत्तर भारतीय मैदानी क्षेत्रों में मुख्य फूल लगने का मौसम मार्च –अप्रैल के बीच होता है। सर्वोत्तम आवश्यक तेल की गुणवत्ता और मात्रा के लिए कप के आकार वाले अवस्था में की जानी चाहिए। फूलों की कटाई सुबह सूर्योदय से पहले शुरू हो जानी चाहिए और तब तक जारी रहनी चाहिए जब तक सूरज की किरणों से ओस सूख नहीं जाती। गुलाब की पंखुड़ियाँ बेहद नाजुक होती हैं, इसलिए उन्हें हाथ से चुना जाता है।

ikèk lj{k.k

दमस्क गुलाब शुरुआती महीनों में बीमारियों और कीटों के प्रति संवेदनशील होता है। छंटाई के बाद, फफूंद के कारण डाईबैक रोग हो सकता है। छंटाई के बाद कटे हुए सिरे पर तुरंत कॉपर फफून्दनाशक का छिड़काव किया जाता है। वसंत के मौसम में मुख्य कीट बॉलवर्म और माहू होते हैं। बॉलवर्म पतंगें कलियों पर अंडे देती हैं और लार्वा पत्तियों, कलियों और फूलों को खाते हैं। एफिड्स के शिशु और वयस्क गुलाब के पौधों का रस चूसते हैं, जिससे पत्तियाँ, तने, कलियाँ और फूल प्रभावित होते हैं।

inkokj

अच्छी कृषि पद्धतियों से प्रति हेक्टेयर औसतन 40–45 क्विंटल फूलों की पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इसे सीधे बेचा जा सकता है या इससे आवश्यक तेल, गुलाब जल, या सूखी पंखुड़ियों जैसे उत्पादों को और प्रसंस्कृत किया जा सकता है। प्रति हेक्टेयर से 1–1.25 किलोग्राम

तेल प्राप्त किया जा सकता है।

neLd rsy mRiknu dh pukSfr;k¡ vkSj volj

दमस्क गुलाब की खेती एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक गतिविधि है, जिसमें पौधरोपण, कटाई और प्रसंस्करण जैसी सभी कृषि गतिविधियाँ शामिल हैं। फिर भी, इसकी खेती उन सभी देशों में चुनौतियों का सामना करती है जहाँ इसे उगाया जाता है।

- गुलाब ठंढ के प्रति संवेदनशील होते हैं और फूलों का असमान प्रतिरूप दिखाते हैं।
- एक बड़ी चुनौती स्थान की उपलब्धता है, क्योंकि वर्तमान बगीचे छोटे और बिखरे हुए हैं, जो भूमि की विरासत के कारण है।
- बाजार में उतार–चढ़ाव के कारण आय बढ़ाने और जोखिम कम करने के लिए किसान गुलाब की खेती से अन्य फसलों या आर्थिक गतिविधियों की ओर रुख कर रहे हैं।
- गुलाब की खेती श्रम–प्रधान होती है, विशेषकर फूल चुनने के लिए अधिक श्रम की जरुरत होती है ।
- कटाई के समय का तापमान फूलों में तेल की मात्रा को प्रभावित करता है; उच्च तापमान पर पंखुड़ियों के ट्राइकोम अपने आवश्यक तेल की मात्रा खो देते हैं।
- वर्तमान तेल आसवन प्रक्रियाओं से गुलाब का तेल कम मात्रा में प्राप्त होता है।
- अधिकांश गुलाब उत्पादकों को नई उत्पादन तकनीकों की जानकारी नहीं है।

fu"d"k

दमस्क गुलाब एक लोकप्रिय गुलाब प्रजाति है जिसका उपयोग स्वाद, सुगंध और तेल निकालने में किया जाता है। रोजा डमास्केना उत्पाद मुख्य रूप से सुगंध और त्वचा देखभाल उद्योगों में उपयोग किए जाते हैं, लेकिन इनमें रोगाणुरोधी, एंटीऑक्सीडेंट और साइटोटॉक्सिक गुण जैसे लाभकारी चिकित्सीय गुण भी होते हैं। हालांकि इसकी खेती में उच्च आर्थिक क्षमता है, इसका उत्पादन कई बाधाओं के कारण सीमित है। वर्तमान में, दुनिया की कुल गुलाब तेल की मांग का केवल आधा (15–20 टन) ही उत्पादन हो रहा है। इसलिए, किसानों को बड़े क्षेत्रों में इसके वैज्ञानिक तरीके से खेती अपनाने और प्रसंस्करण सुविधाएँ स्थापित करने की आवश्यकता है, क्योंकि इस फसल की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में उच्च मांग है।

सभी सभ्य देशों की अदालतों में उनके नागरिकों की बोली और लिपि का प्रयोग किया जाता है।

– भारतेन्दु हरिशचन्द्र

सब्जियों के उत्पादन में बीज उपचार की भूमिका

, l- d- ekg'ojh[1]] ch- vkj- pkèkjh[1]] gj -".k[2]] dyk'k iVy[2]] vkj- d- ehuk[1] ,o ,- d- oek[1]

[1]भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर
[2]भाकृअनुप – भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

सब्जियाँ भारतीय आहार का एक महत्वपूर्ण घटक हैं। सब्जियों के खाने से हमारे शरीर को बहुत आवश्यक पोषक तत्व मिलते हैं। इनका उपयोग सब्जी के रूप में लौकी, तोरई, करेला, काशीफल, परवल, बैंगन व टमाटर; मीठे फल के रूप में तरबूज व खरबूजा और मिठाई बनाने में पेठा और परवल आदि का प्रयोग किया जाता है। किसी भी प्रकार की सब्जी के उत्पादन के लिए बीज एक महत्वपूर्ण और महंगा साधन होता है। फसल उत्पादन की कुल लागत का लगभग 20–25 प्रतिशत भाग अकेले बीज पर ही खर्च हो जाता है। सब्जियों वाली फसलों में कई प्रकार की व्याधियां जैसे–झुलसा रोग, चुर्णिल आसिता, श्यामवरण (एन्थ्रेक्नोज) रोग, म्लानि रोग (विल्ट) एवं विषाणुजनित बीमारियां आदि आती हैं। किसानों को इन विभिन्न बीमारियों के कारण फसलों में बहुत नुकसान होता है जिससे इनकी उपज एवं गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

फसलों के रोग मुख्यतः बीज, मिट्टी तथा हवा के माध्यम से फैलते हैं। फसल के दाने का पूर्ण या आधा भाग जिसमें भ्रूण उपस्थित हो, अंकुरण क्षमता अच्छी हो, भौतिक तथा आनुवांशिक रूप से शुद्ध हो, को बीज कहते हैं। अतः स्वस्थ फसल प्राप्त करने के लिए हमें बीजों को बीमारियों से बचाकर रखना चाहिए जिसके लिए हमें फसलों के बीजों को बोने से पहले रासायनिक दवाओं (कवकनाशी आदि) एवं कुछ जैव–एजेंट/रसायन और पोषक तत्वों की उपलब्धता बढाने के लिए कुछ जैव उर्वरकों से उपचारित किया जाता है। इसे बीजोपचार कहते हैं। बीजोपचार का उद्देश्य न केवल बीज एवं मृदा जनित बीमारियों की रोकथाम करना होता है बल्कि बीज अंकुरण के पश्चात अंकुरित पौधे को एक स्वस्थ एवं ओजपूर्ण पौधा विकसित करना है जिससे फसल बहुत अच्छी रहती है जिसकी वजह से सब्जी का उत्पादन अच्छा प्राप्त होता है।

बीजोपचार को सब्जी/फसल उत्पादन की प्रथम श्रेणी में रखा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। बीज की ऊपरी तथा अंदर की पर्तों में अनदेखी फफूँदी रहती है जो बीज के साथ भूमि में जाकर बीज के अंकुरण को प्रभावित करती है और रोगों की प्रारंभिक अवस्था को सफल बनाती है यदि बीज का उपचार कर दिया जाय तो ये अनदेखी फफूँदों का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा और रोगों की प्रारंभिक अवस्था पर ही रोक लग जायेगी।

ch t mipkj dh fofèk

v ½ ch t M¨Ç l x l ch t mipkj

इस विधि में सब्जी के बीज को या तो सूखे चूर्ण (पाउडर) या मिश्रण से उपचारित किया जाता है या फिर तरल घोल से गीले रूप में (हल्का पानी का छिड़काव करके) उपचारित किया जाता है। बीजों के उपचार के लिए बीज उपचार ड्रम का उपयोग किया जाता है। ड्रम के अन्दर निर्धारित मात्रा में बीज एवं कवकनाशी आदि दवा की मात्रा लेकर ड्रम का ढक्कन बंद करके 15–25 मिनट तक घुमाते है और जब बीज की सतह पर दवा की परत दिखाई दे तब बीजोपचार की प्रक्रिया पूरी हो जाती है। कम कीमत में बीजोपचार करने के लिए मिट्टी के बर्तन का भी उपयोग किया जा सकता है। मिटटी के बर्तन में दवा और बीज निर्धारित मात्रा में लेकर बर्तन का मुंह बंद करके उसे अच्छी तरह हिलाकर बीजोपचार किया जा सकता है। मिश्रित बीज को धूप मे थोड़ी देर जरूर रखें।

c½ ch t dkÇVx l ch t mipkj

इस विधि में सब्जी के बीज पर दवा को अच्छे से चिपकाने के लिए कवकनाशी दवा के मिश्रण के साथ विशेष प्रकार के बाइंडर का उपयोग किया जाता है। बीज पर कोटिंग के लिए बड़े स्तर पर इसे अपनाते है। इस विधि द्वारा बीज उपचारित करने के लिए उन्नत प्रकार की प्रौधोगिकी और कुशल श्रमिक/तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यकता होती है।

l ½ Lyjh ch t mipkj

1. स्लरी (घोल) बनाने हेतु रसायन या जैव रसायन की अनुशंसित मात्रा को 10 लीटर पानी की मात्रा में किसी टब या बड़े बर्तन में अच्छी तरह मिला लें।

2. इस घोल में बीज, कंद या पौधे की जड़ों को 10 से 15 मिनट तक डालकर रखें, फिर छाया में बीज या कंद को सुखा ले तथा बुआई या रोपाई करें।

n ½ xel ikuh mipkj

1. किसी धातु के बर्तन में पानी को 52 डिग्री सेंटीग्रेड तक गर्म करें।

2. बीज को 30 मिनट तक उस बर्तन में डालकर छोड़ दें, उपरोक्त तापक्रम पूरी प्रक्रिया में बना रहना चाहिए।

3. बीज को छाया में सुखा लें उसके बाद बुआई करें।

chtkipkj ds ykHk

- बीज उपचार द्वारा बीज में उपस्थित आन्तरिक या वाह्य रूप से जुड़े रोगजनक (फफूद, जीवाणु, विषाणु एवं सूत्रकृमि) और कीट नष्ट हो जाते है। इसलिए आरम्भिक रोगों का प्रभावी नियंत्रण भी होता है।
- बीज अंकुरण में बढ़ोत्तरी होती है एवं स्वस्थ विकास करके अधिक प्रबल पौधे उत्पन्न होते हैं ।
- बीजों का अंकुरण एक समान रूप मे होता है ।
- बीज उपचार मृदा एवं पत्तियों में प्रयोग करने की तुलना मे ज्यादा अच्छा परिणाम देता है ।
- स्वस्थ पौधों की संख्या अधिक होती है।

chtkipkj djrs le; lkoèkkfu;k

- उन्नत और रोग प्रतिरोधी किस्मों के स्वच्छ और स्वस्थ बीज से बुआई की जाये।
- बीजोपचार हेतु खरीदे गए रसायन की अंतिम तिथि अवश्य देख लें।
- रोग के अनुसार ही सम्बंधित रसायन का चयन करें ।
- रसायन का प्रयोग संस्तुत मात्रा में ही करना चाहिए।
- बीजों को पहले फफूंद नाशक दवा/अनुशंसित रसायन से उपचारित करना चाहिए ।
- बीजोपचार के बाद उपचारित बीज को कभी भी खुली धुप में नहीं सुखाना चाहिए अपितु छायादार स्थान पर ही सुखाना चाहिए ।
- बीजोपचार के बाद उपचारित बीज को 8 घंटे के अंदर बुवाई कर देना चाहिए ।
- बीज शोधन के समय हाथ में दस्ताने तथा चेहरे पर साफ कपड़ा बांधना चाहिए।
- बीज शोधन के पश्चात हाथ–पाँव व चेहरा साबुन से भली–भांति धोना चाहिए ।
- यदि बोने के बाद उपचारित बीज बच जाए तो उसे जानवरों को नही खिलाना चाहिए।
- बोने के बाद उपचारित बीज की मात्रा बच जाए तो उसे खुद खानेँ मे नही लेना चाहिए।
- कवकनाशी आदि दवाओं को उपयोग करने के बाद इनके खाली डिब्बे को खेत के बाहर नष्ट कर देना चाहिए।

lCth esa cht mipkj dh Hkwfedk

बीजोपचार को सब्जी/फसल उत्पादन की प्रथम श्रेणी में रखा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। बीज की ऊपरी तथा अंदर की पर्तों में अनदेखी फफूँदी रहती है जो बीज के साथ भूमि में जाकर बीज के अंकुरण को प्रभावित करती है और रोगों की प्रारंभिक अवस्था को सफल बनाती है यदि बीज का उपचार कर दिया जाये तो ये अनदेखी फफूँदों का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। सब्जियों के उत्पादन में बीज उपचार की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है क्योंकि यह बीज जनित रोगों और कीटों से होने वाले नुकसान को घटाता है, अन्यथा पौधों के बढ़ने के बाद इनको रोकने के लिए अधिक मूल्य खर्च करना पड़ता है और क्षति भी अधिक होती है। बीजों में अंदर और बाहर रोगों के रोगाणु अवस्था में (बीज जनित रोग), मिट्टी में (मिट्टी जनित रोग) और हवा में (वायु जनित रोग) मौजूद रहते हैं। ये अनुकूल वातावरण के मिलने पर उत्पन्न होकर पौधों पर रोग के लक्षण के रूप में प्रकट होते हैं। अगर कोई किसान कम मात्रा मे बीजों को उपचारित करना चाहता है तो इसके लिए मिट्टी के बर्तन का उपयोग किया जा सकता है। परंतु अगर किसान अधिक मात्रा मे बीजों को उपचारित करना चाहता है तो इसके लिए बीज उपचार के लिए ड्रम का उपयोग किया जा सकता है। कुछ सब्जियों के बीजोपचार के बारे मेँ निम्न प्रकार से बताया गया है :–

[kjcwtk dh Eykfu jksx ¼foYV½ ds y{k.k

इसमें पौधा मुरझा कर सूख जाता है, पत्तियाँ पीली हो जाती है, कॉलर वाला क्षेत्र सिकुड़ जाता है। पौधों की जड़ें व भीतरी भाग भूरा हो जाता है। पौधों की बढ़वाररुक जाती है।

cht mipkj % खरबूजा के बीजों को बोने से पहले कार्बेंडाजीम (2 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर) या ट्राइकोडर्मा हरजियानम (5 ग्राम/किलोग्राम बीज) से उपचारित करें जिससे फसल मेम्लानि रोग आने की संभावना कम हो जाती है।

cSxu dh vknz Z iru jksx&

jksx ds y{k.k % यह रोग मुख्यतः अर्ध–शुष्क क्षेत्र में पाया जाता है। यह रोग पौधशाला (नर्सरी) में उगे हुये पौधों पर लगता है जिससे काफी क्षति पहुंचती है। बरसात के मौसम में उच्च आर्द्रता के साथ मिट्टी में नमी और मध्यम तापमान विशेष रूप से बीमारी के विकास को बढ़ावा देते हैं। इस बीमारी में दो प्रकार के लक्षण पाये जाते हैं:

vadqj.k okyk vknz Z iru jksx& मिट्टी से अंकुरण के पहले बीज अधिक नमी के संपर्क में आने से गल जाते हैं।

vdj.k d ckn vkæ iru jkx& जमीन के स्तर पर कॉलर ऊतकों में संक्रमण हो जाता है। संक्रमित ऊतक नरम हो जाते हैं जिससे कॉलर भाग सड़कर मर जाते हैं।

cht mipkj: बुवाई के लिए स्वस्थ बीज का चयन किया जाना चाहिए और बोने से पहले बीज को केप्टान (2 ग्राम /किग्रा बीज) या ट्राइकोडर्मा हरजियानम (5 ग्राम / किलोग्राम बीज) से उपचार किया जाना चाहिए।

Qkekfl l >ylk jkx

jkx d y{k.k : यह संक्रमित बैंगन फल की एक बड़ी गंभीर बीमारी है। जब पत्तियां संक्रमित होती हैं तो छोटे व गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं जो किनारे के साथ–साथ भूरे रंग के हो जाते हैं। संक्रमित फलों पर लक्षण धुंधले धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं जो बाद में विलय हो जाते हैं। गंभीर रूप से संक्रमित फल भी सड़ जाते हैं।

cht mipkj: बीमारी के पौधों से प्राप्त बीज बैंगन के रोपण के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। नर्सरी में बीज उपचार थीरम नामक कवकनाशी (2 ग्राम/किलोग्राम) से करना चाहिए।

iÙkk&xkHkh ,o Qyxkhkh dh MïEix v,Q chekjh

cht mipkj: कैप्टेन 1.5 से 2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से बीज उपचार किया जाना चाहिए। स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 5–10 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से बीज ड्रेसर के रूप में बीज उपचार किया जाना चाहिए। इन सब्जियों के सीडलिंगस को ट्राइकोडर्मा हरजियानम या स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस (5–10 ग्राम/किलोग्राम बीज) की दर से इस सस्पेन्शन घोल में डुबोकर ही खेत में रोपित करना चाहिए।

rjcht e ekt d chekjh d y{k.k% पौधें छोटे रह जाते हैं तथा ग्रसित पौधों की नयी पत्तियाँ छोटी, पीले धब्बे दिखते हैं। पत्तियाँ सिकुड़ कर मुड़ जाती है तथा एक पीला मौजेक दिखाई देता है जिससे क्लोरोटिक पैचेज दिखते हैं। फल भी छोटे व विकृत हो जाते हैं।

cht mipkj% प्रमाणित व उपचारित बीज का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए इमिडाक्लोप्रिड (1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर) से उपचारित करें जिससे फसल मे रोग की संभावना कम हो जाती है।

VekVj dk thok.k uked mdBk jkx d y{k.k% पौधों की पत्तियाँ हल्की पीली हो जाती है। पौधों की जड़ें व भीतरी भाग भूरा हो जाता है। पौधों की बढ़वार रुक जाती है। कभी–कभी स्वस्थ पौधे बिना किसी पीलेपन के नीचे की तरफ झुक कर मुरझा जाते हैं जिससे पौधा शीघ्र मर जाता है।

cht mipkj % पौध रोपड़ के समय स्वस्थ पौध का प्रयोग करें। स्युडोमोनाज फ्लोरेसेंस नामक जैव एजेंट (5 ग्राम /लीटर पानी में मिलाकर) से पौध को उपचारित करने से लाभ होता है।

> जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य पर गर्व का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता।
>
> –डॉ. राजेंद्र प्रसाद

पॉली हाउस में सूत्रकृमि से होने वाली समस्याएं एवं उनका उपचार

dSyk'k iVsy[1] vtqZu yky ;kno[1] jkgqy tk[kM+[2] ctjax yky vkj ,l- ds- egs'ojh[3]

[1]कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)
[2]कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राजस्थान)
[3]भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

भारत में अनेक कृषि जलवायु परिस्थितियां उपलब्ध है, लेकिन हमारे देश में सब्जियों की खेती की प्रक्रिया आम तौर पर पारंपरिक तकनीक और प्रथाओं के साथ क्षेत्रीय और मौसमी जरूरतों तक सीमित होती है, जिसके परिमाणस्वरूप बाजार आपूर्ति अनुरूप कम पैदावर और असंगत गुणवता और मात्रा का उत्पादन होता है। बढ़ती आबादी के कारण सब्जियों की जररूत व मांग में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। यही कारण है कि हमारे देश में विविध प्रकार के फल व सब्जियों उगाई जाती है। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियां, सब्जियों, फलों और फूलों की उच्च उत्पादन क्षमता, कृषि निवेश की उपलब्धता, छोटी और खंडित भूमि जोत और गुणवता वाली सब्जियों की बढ़ती मांग जैसे कारकों को देखते हुए सरंक्षित खेती को अपनाने की आवश्यकता है।

वर्ष भर में फल एवं सब्जियों उत्पादों की उपलब्धता और विशेष रूप से गैर मौसम के दौरान फल व सब्जियों की खेती उत्पादकों को संरक्षित खेती को अपनाने को मजबूर करती है। संरक्षित खेती फल एवं सब्जियों उत्पादन की एक ऐसी तकनीक है जिसमे पौधों के आसपास का सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र फसल की आवश्यकता के अनुसार नियंत्रित किया जाता है। पोलीहॉउस में उच्च तापमान, आर्द्रता, उर्वरको ओर पौधों की वृद्धि प्रवर्तकों जैसे उच्च कृषि आदानों का प्रयोग कर अनुकूल स्थितियों में फसल उत्पादन किया जाता है। लेकिन कई समस्याएं है जो सब्जियों की सरंक्षित खेती के सुचारुपन को प्रतिबंधित करती है।

lw=—fe }kjk gkfu okyh {kfr dk Lrj

किसी फसल को सूत्रकृमि द्वारा पहुंचाई जाने वाली क्षति की मात्रा काफी भिन्न होती है। उच्च कृषि इन्पुटस के प्रयोग व अनुकूल स्थितियों के नतीजन, संरक्षित खेती में सूत्रकृमि (निमेटोड) का प्रकोप गंभीर समस्या बन जाती है। यह फसल के प्रकार, रोपण के समय मिट्टी में मौजूद परजीवी सूत्रकृमि के प्रकार और संख्या और पर्यावरणीय स्थितियों पर निर्भर करता है। जब सूत्रकृमि मिट्टी में मौजूद होते हैं, तो व्यक्तिगत पौधों को उपज में कोई हानि नहीं हो सकती है, या वे इतने संक्रमित हो सकते हैं कि मर जाएं। भारत में पादप परजीवी सूत्रकृमि के कारण औसतन 21,068. 73 करोड़ रुपये का वार्षिक राष्ट्रीय अनुमानित नुकसान सभी प्रकार की फसलों को मिलकर होता है। किसानों द्वारा अपनाई गई प्रबंधन पद्धतियों में रसायन का निरंतर एवं अक्सर अनुशंसित दरों से अधिक उपयोग शामिल है जिसके परिणामस्वरूप सूत्रकृमि में प्रतिरोध क्षमता का निर्माण होता है। इसके अलावा, बायोमैग्नीफिकेशन, पर्यावरण में गिरावट और खतरनाक रसायनों के कारण कई पारिस्थितिक तंत्र अस्थिर और गैर–लाभकारी हो गए हैं। इन सभी कारणों से पिछले कुछ वर्षो में फल एवं सब्जियों के उत्पादन में लगभग ठहराव सा दिखाई देता है ।

i,yhgkml esa l=—fe ls çHkkfor Qlys

- शिमला मिर्च, मिर्च, बैंगन, टमाटर, खीरा, गुलाब, जरबेरा, लिलियम और स्ट्राबेरी फसले जो प्राय सूत्रकृमि से प्रभावित है।
- सूत्रकृमि सक्रंमण फसल के कवक रोगों की गभीरता को बढ़ाकर फसल को पूरी तरह नष्ट कर सकते है । जड़ गांठ सूत्रकृमि सक्रंमण, सूखा रोग (फ्यूजेरियम) हमले के प्रति पौधों को अत्यधिक संदेवनशील बनता है।
- प्रमुख रोग जनक– मेलाइडोगायनी जावानिका, मेलाइडोगायनी इनकोगनिटा, मेलाइडोगायनी अरनेरिया प्रजातियां।

i,yhgkml esa l=—fe dh la[;k c<+us ds eq[; dkj.k

- मिटटी, फसल अवशेष और रोपण सामग्री के माध्यम से सूत्रकृमि का प्रकोप तेजी से फैलना।
- बार–बार एक ही फसल लेना, फसल चक्र का ना अपनाना ।
- सूत्रकृमि कि समस्या वहा पाई जाती है जहा का वातावरण थोड़ा गर्म रहता है।

Qly esa l=—fe çdksi ds y{k.k

अक्सर किसान सूत्रकृमि ग्रस्त लक्षणो कि अनदेखी करते है क्योंकि उन्हे ठीक से पहचाना नही जाता। सूत्रकृमि ग्रस्त पौधों में पोषक तत्वों की कमी जैसे लक्षण दिखाई देते है। मिटटी के नीचे सूत्रकृमि की उपस्थिति के लक्षण तब तक दिखाई नहीं देते जब तक पीड़ित पौधों कि पहचान के लिए उखाड़ कर ध्यान से नहीं देखा जाता।

- जमीन में नमी के बावजूद भी पौधे दोपहर के साथ

मुरझाये हुए दिखाई देते है।

- पौधे बौने कमजोर रह जाते है, पत्ते पीले पड़ जाते है।
- पैदावार में कमी आ जाती है।

i,yhgkml e l=–fe d y{k.k

पर्याप्त क्षति होने के बाद क्लोरोसिस और स्टंटिंग जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। खुले मैदान में खेती की तुलना में पॉलीहाउस खेती में सूत्रकृमि की प्रसार दर 10 से 30 गुना तक पहुंच गई हैं।

l=–fe çdki dk çcèku

आमतौर पर सूत्रकृमि रोग प्रबंधन पर अन्य बीमारियों की तुलना में कम ध्यान दिया जाता है। लेकिन पॉलीहॉउस के तहत फल एवं सब्जियों से अधिक आय के लिए सूत्रकृमि जनित बीमारियों का नियमित रूप से निदान और प्रबंधन बहुत ही आवश्यक है।

- पोलीहाउस एवं ग्रीनहाउस बनाने से पहले उस स्थान की मिटटी की सूत्रकृमि समस्याओं के लिए जांच अवश्य करवानी चाहिए।
- पॉलीहॉउस एवं ग्रीन हाउस को खरपतवार एवं पिछली फसल के अवशेषो से हमेशा मुक्त रखना चाहिए।
- अप्रैल से जुलाई तक पॉलीहॉउस एवं ग्रीन हाउस को खाली रखना चाहिए।
- मई–जून के महीनो में 10–15 दिन के अंतराल पर 2–3 गहरी जुताई करना चाहिए।
- जून –जुलाई में जमीन को हल्का पानी देकर प्लास्टिक शीट से ढकना चाहिए।
- नीम की खल (200 ग्राम प्रति वर्ग मीटर) तथा ट्राइकोडर्मा विरिडी (50 ग्राम प्रति वर्ग मीटर) फसल की रोपाई से एक सप्ताह पहले मिटटी के ऊपरी भाग में अच्छी तरह मिलाकर हल्का पानी देना चाहिए।
- रोपाई के एक महीने बाद दोबारा नीम की खल 50 ग्राम प्रति पौधे की दर से हर पौधे के चारो तरफ मिटटी में अच्छी तरह से मिलाना चाहिए।
- फंफूद का प्रकोप होने पर मोटी नोजल से कार्बेन्डाजिम (बाविस्टिन) दवा 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से पोधो की जड़ो के पास डालना चाहिए।

lefUor l=–fe çcèku

सूत्रकृमि समन्वित/एकीकृत प्रबंधन के लिए मिटटी की जाँच, मिटटी संसोधन, नर्सरी उपचार, खरपतवारो से मुक्त, पर्णीय छिड़काव आदि तरीको को अपनाया जाना चाहिए। कृषि क्रियाओ, जैविक और रासायनिक पद्धतियों के सामूहिक उपयोग से सूत्रकृमि प्रकोप को काफी कम किया जा सकता है । रसायनो का इस्तेमाल जब जरूरत होती है तभी किया जाना चाहिए। पैसिलोमाइसेस लिलासिनस, ट्राइकोडर्मा हार्जियानम, टी. विरिडी और स्यूडोमोनस फ्लोरेसेन्स जैसे जैव–कीटनाशकों का उपयोग करना चाहिए।

किसान अगेती आलू लगायें और लाभ कमायें

jkgrk'k Çlg Hknkfj;k[1]] KkuUæ çrki frokjh[1]] l|'khy dekj[1]] vkfnR; çrki jkBkj[1]
lo;'k f=ikBh[1] ,o ,-d- oek[2]
[1]कृषि विज्ञान केन्द्र जावरा, जिला रतलाम, मध्य प्रदेश
[2] भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

आलू कंदीय सब्जी वाली फसलों में महत्वपूर्ण फसल है, जो कि दक्षिण एशिया एवं अफ्रीकी देशों में मानवीय आहार की आवश्यकताओं (पोषक पदार्थों) की पूर्ति का महत्वपूर्ण साधन है। भारत के हिन्दी भाषी राज्यों में तो आलू के बिना एक समय (दैनिक थाली) के भोजन की कल्पना भी करना असंभव है। मध्यप्रदेश के मुरैना (जौरा,पोरसा) और म.प्र. के सीमावर्ती जिलों अलीगढ़, आगरा आदि तहसीलें तो आलू का तीर्थ कहीं जा सकती है।चूंकि यहाँ की भूमि व जलवायु आलू की खेती के लिये सर्वोत्तम है। अतः इन भागों पर अगेती आलू भी लगाया जाता है। बशर्ते उन्हें जनवरी माह में पाले से बचाव का विशेष ध्यान रखना पड़ेगा। किसानों द्वारा पाले से बचाकर आलू की फसल समय से पूर्व बाजार में लाकर अधिक लाभ कमाया जा सकता है तथा उसके बाद गेहूँ व उसके बाद प्याज लगाकर भूमि का तथा प्राकृतिक साधनों का उचित दोहन कर भरपूर लाभ कमाया जा सकता हैं। चूंकि आलू में कार्बोहाईड्रेट की मात्रा 22 प्रतिशत होती है, जो कि ऊर्जा का अच्छा स्त्रोत होने के साथ–साथ अन्य पोषक तत्व भी पाये जाते है। जैसे आलू कंद में प्रोटीन के रुप में ट्रिप्टोफेन ल्यूसीन तथा आइसोल्यूसीन अमीनों अम्ल पाये जाते है। आलू के खाने योग्य प्रत्येक 100 ग्राम खाये जाने वाले भाग में 17 मिलीग्राम विटामिन 'सी' तथा 568, मि.ली.ग्राम पोटेशियम पाया जाता है।

आलू में उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीन की मात्रा कंद के कुल भार की 2 प्रतिशत होती है। आलू के कंदो में सोलेनीन, चाकोनीन, और ग्लाइको एल्केलॉयड नामक हानिकारक तत्व भी पाये जाते है। आलू में सोलेनीन की 5 मि.ली. ग्राम/100 ग्राम तक मात्रा खाने योग्य होती है। परन्तु यही मात्रा अगर 20 मि.ली.ग्राम/100 ग्राम से अधिक हो जाये तो मानवीय स्वास्थ्य पर इसका हानिकारक प्रभाव पड़ता है। आलू एक परम्परागत कंदीय फसल है। अतः इसके लिये भूमि जीवांश पदार्थों से भरपूर एवं भुरभुरी होनी चाहिए जिसका पी.एच मान 5.5–8.0 तक सर्वश्रेष्ठ होता है। रेतीली दोमट या सिल्ट दोमट मृदा आलू उत्पादन के लिए सर्वोत्तम समझी जाती है। जबकि व्यपारिक दृष्टि से काली कपासी मृदाओं में भी आलू उगाया जा सकता है, किन्तु उस मृदा में भीगने पर फूलने एवं सूखने पर एकाएक चटकने की समस्या के कारण आलू कंद का छिलका क्षतिग्रस्त होने के कारण भण्डारण योग्य नहीं रह जाता । अतः इस प्रकार के मृदाओं में स्थानीय बाजार की पूर्ति हेतु आलू उगाया जा सकता है।

tyok;q&

मैदानी भागों में अगेती आलू की बुआई हेतु 22 सितम्बर से 12 अक्टूबर तक सर्वोत्तम समय होता है। क्योंकि पौधों की वानस्पतिक वृद्धि के लिये बडे दिन व कन्दों के निर्माण हेतु छोटे दिनों की आवश्यकता होती है। 20 डिग्री सेण्टीग्रेड तापमान सर्वोत्तम माना जाता है। आलू की अच्छी फसल हेतु वार्षिक जलमांग 350–550 मि.मी. होती है। 22 डिग्री सेण्टीग्रेड के तापमान अधिक होने पर कन्द निर्माण अच्छी प्रकार से नही होता है।

egRoi.kZ fdLe&

1-dqQjh [;kfr– आलू की यह किस्म सन् 2008 मे सी.पी. आर.आई. कुफरी शिमला विकसित हुई। एक अगेती अधिक उत्पादन देने वाली किस्म है। जिसके कन्द श्वेत रंग के होते है। यह किस्म मध्यम पिछेती अंगमारी के प्रति प्रतिरोधी होती है। यह मैदानों के लिये उत्तम किस्म है। यह किस्म अन्य अगेती किस्मों के अपेक्षा अधिक उत्पादन देने वाली होती है। कुफरी ख्याति किस्म अति अगेती 60 दिन में तथा अगेती 75 दिनों में बुआई के बाद कंद खोदने योग्य हो जाती है। जो कि उचित देखरेख करने पर 250–300 क्विं./हेक्टर तक उपज देती है। यह किस्म उच्च अगेती किस्मों जैसे कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर, कुफरी अशोक तथा कुफरी पुखराज की जगह ली जा सकती है।

2- dqQjh pUæeq[kh & आलू की यह किस्म सन् 1968 में सी.पी.आर.आई. कुफरी शिमला में विकसित हुई इस किस्म के कन्द आकार में बडे होने के साथ–साथ अण्डाकार रुप

लिये होते है। तथा उनके अन्दर का भाग (गूदा) सफेद होता है। इस किस्म के पौधे मध्यम ऊँचाई लिये हुए होते है। तथा पौधो पर आये हूए पुष्पों का रंग हल्के लाल बैंगनी रंग वाले होते है। यह किस्म रोपाई के 90–100 दिनों बाद खुदाई के योग्य हो जाती है। इस किस्म से 250 कु./हेक्टेयर तक उपज आसानी से प्राप्त हो जाती है। यह किस्म मध्यप्रदेश में उगाने एवं चिप्स बनाने में उपयोग कर सकते है।

3- dQjh yodkj& आलू की यह किस्म सन् 1972 में सी. पी.आर.आई. कुफरी शिमला में विकसित हुई इस किस्म के पौधे अधिक ऊँचाई लिये हुए जिन पर गहरे स्लेटी रंग की पत्तियाँ होती है। इसके पौधो पर सफेद रंग के पुष्प आते है। आलू की यह किस्म बुआई के 75–80 दिनों बाद ही खोदने योग्य हो जाती है। इस किस्म से 200–250 कु. प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त हो जाती है। इस अगेती किस्म की यह विशेषता है, कि इसके कंदो से चिप्स भी बनाये जा सकते है। इस किस्म के भी कन्द आकार में बड़े गोल होते है। इसे रबी व खरीफ दोनों ही मौसमों में उगाया जा सकता है।

4-dQjh cgkj& आलू की यह किस्म सन् 1982 में सी.पी. आर.आई. कुफरी शिमला विकसित हुई है। इस किस्म के कन्द आकार में बड़े गोल से अण्डाकार होते है। इस किस्म के पौधे ऊँचाई वाले जिनकी पत्तियाँ स्लेटी हरा रंग की होती है। इस किस्म के पौधो पर भी पुष्प सफेद रंग के होते है। कंद बुआई के 100–110 दिनों बाद ही खुदाई के लिये तैयार हो जाते है। इसकी उपज 450 कु./हेक्टेयर पर तक होती है। परंतु इस किस्म के कन्दों से चिप्स नहीं बनाये जा सकते है।

5-dQjh tokgj& आलू की यह किस्म सन् 1996 में सी. पी.आर.आई. कुफरी शिमला विकसित हुई जो कि सघन खेती के लिये उपयुक्त होती है। इस किस्म के पौधे आकार में छोटे होते है। जिसकी पत्तियाँ हल्के हरे रंग की होती है। तथा कंदो का गूदा क्रीमी सफेद होता है। कंद आकार में गोल अण्डाकार होते है। यह किस्म के कंद भी चिप्स बनाने में उपयुक्त नहीं मानी जाती है। उपज – 400 क्विं./हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।

6- dQjh v'kksd& इस किस्म के पौधे मध्यम ऊँचाई वाले होते है। तथा इस किस्म के कन्द बडे आकार के होते है। जिनका गूदा सफेद होता है। यह किस्म बुआई के 70–80 दिनो बाद खुदाई योग्य हो जाती है। इस किस्म के कन्द खाना पकाने समय अन्य किस्मो की अपेक्षा आसानी से पक जाती है एवं 275 क्विंटल /हेक्टर तक उपज प्राप्त हो जाती है। यह किस्म भी चिप्स बनाने के लिये उपयुक्त नहीं होती है।

7-dQjh T;ksfr& आलू की यह किस्म सन् 1968 में सी.पी. आर.आई. कुफरी शिमला विकसित की गयी थी इस किस्म के पौधे मध्यम ऊँचाई वाले होते है। इस किस्म के कन्द बुआई के 100 दिनों में खुदाई के योग्य हो जाते है। इस किस्म की मैदानी इलाकों में उपज 300 कु. प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है। यह किस्म चिप्स बनाने योग्य है।

8-dQjh i[kjkt– शीघ्र ही खुदाई हेतु लगभग रोपाई के 70–80 दिनों में तैयार हो जाती है एवं अगेतीझुलसा रोग के प्रति प्रतिरोधी है। मध्यप्रदेश में आसानी से उगायी जा सकती है तथा उपज 350 क्विंटल/हेक्टर आसानी से प्राप्त हो जाती है। कंद बड़े एवं अण्डाकार सब्जी बनाने के लिए बढ़ियाहै।

9-dQjh l;k– अगेती किस्म जो कि 75 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है तथा जिन मैदानी क्षेत्रों में रात्रिकालीन तापमान 20 डिग्री सेण्टीग्रेड से अधिक हो जाता है वहां पर भी आसानी से उगाकर 200 क्विंटल / हेक्टर उपज प्राप्त कर सकते है। यह किस्म मानव रक्त शर्करा को अन्य की अपेक्षा कम वृद्धि करती है।

xh"e dkyhu tqrkÃ&

आलू की अगेती खेती करने के लिये चयनित खेत को 15 मई–15 जून माह के दौरान ही खेत में खरपतवार, फफूंद एवं भूमिगत कीटों को नष्ट करने के लिए एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करना चाहिये, ताकि खेत में नीचे के कीट जैसे उपस्थित सफेद ग्रब एवं दीमक इत्यादि नष्ट हो सकें तथा दूसरी तथा तीसरी जुताई हैरो या हल से करनी चाहिए। यदि ढेले बड़े–बड़े आकार के हो तो पाटा चलाकर समतल करना चाहिए।

cht dh ek=k ,oa cqvkÃ dk le;&

अगेती आलू की बुआई का सर्वोत्तम समय 22 सितम्बर से लेकर 12 अक्टूबर तक का सबसे अच्छा होता है। जबकि स्थानीय जलवायु और मृदा के आधार पर यह थोड़ा–बहुत आगे–पीछे भी कर सकते हैं। बुआई के समय अधिकतम दिन का तापक्रम 320 डिग्री सेण्टीग्रेड तथा रात्रि

का 18–20 डिग्री सेण्टीग्रेड उत्तम माना जाता है।

dnk dk p;u%&

बुआई के समय बाजार में आलू महंगा होता है। अतः आलू की बुआई (खेती) का सबसे मंहगा हिस्सा आलू कंद का बीज होता है। आलू किसानों को मान्यता प्राप्त संस्थानों से स्वस्थ कंदों को ही खरीदना चाहिये कंदो का आकार अत्यधिक छोटा भी नहीं होना चाहिए क्योंकि अत्यधिक छोटे होने पर उनमें रोगो व कीटों की समस्या होती है, तथा बाद में फसल में नुकसान कर सकते है। तथा कई प्रयोगों से यह भी सिद्ध हुआ है कि अत्यधिक छोटा आलू में पोषक पदार्थ कम होने के कारण उनका अंकुरण देर से व पौधे अच्छे नहीं आते जिससे कि आलू का उत्पादन घट जाता है कम से कम कंद का आकार व्यास में 2.5 से.मी. से 3.2 से.मी. सबसे उत्तम माना जाता है। तथा वह भार में 40–50 ग्राम वाला हो और जिसमें कम से कम एक आँख में तीन कलियाँ होनी चाहिये।

dn mipkj%&

हम जिन कंदो का उपयोग बुआई हेतु कर रहे है। उन कंदो को बोरो सहित शीतगृह से निकालकर 24 घण्टे तक छायादार स्थान में रखते है। उसके बाद इन कंदो को बोरियों से निकालकर लगभग 10 दिनों तक छायादार स्थान में फैलाकर रखते है। जिससे कि कंदो की आँख निकल आयें । यदि आलू के कंद बडे हो तो उन्हें इस प्रकार काटा जायें कि प्रत्येक टुकड़े में कम से कम 2–3 आँख अवश्य ही हो। आलू के कंदो को बुआई से पूर्व 0.5 प्रतिशत एग्रोसान या एरीटान या टेफासान के घोल में 15 मिनिट तक डुबोकर रखे ताकि कंदो को काली रूसी व आलू सड़न से बचाया जा सके। अब इन टुकडों को 24 घण्टे के अन्दर ही मुख्य खेत में रोप देवें।

cht nj rFkk dn jkikÃ njh%&

आलू के बीज की दर आलू के आकार पर निर्भर करती है। सामान्य तौर पर आलू की प्रति हेक्टेयर बीज दर 3.5 से 4 टन प्रति हेक्टेयर रखते है। आलू के कंदो को बुआई हेतु आदर्श पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 से.मी. से लेकर 60 से.मी. तक तथा पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से.मी. रखे तो अच्छा उत्पादन मिलेगा। आलू के कंदों के बीज का आकार 40 से 60 ग्राम प्रति कंद होना चाहिए।

cvkÃ fofèk%& e[;r% rhu #ik e vky dh cvkÃ dh tkrh gA

1-lery fofèk%&इसमें बोने के लिये खेत में रस्सी के सहारे सीधी कतारें डाल कर बुवाई की जाती है। इसके बाद इन कतारों पर खुरपी की सहायता से उथले कूँड़ बना लिये जाते है। अब इन कूड़ो पर आलू बोने के बाद ऊपर से मिटटी से ढककर खेत को समतल बना दिया जाता है।

2-cvkÃ dh ckn feVVh p<kuk%&इसमें सबसे पहले 50–60 से.मी. की दूरी पर कतारें खींच कर अब इन कतारों पर 15–20 से.मी. की दूरी पर आलू के कंद रोपे जाते हैं। इसके बाद इन कंदो पर दोनों तरफ से मिटटी चढ़ा दी जाती है।

3-e<s ij dn yxkuk%& इस विधि में खेत में उचित दूरी पर मेढ़े व बंड मेकर की सहायता से बनाकर व इन मेढो पर 60 से.मी. की दूरी पर तथा कंदो को 20 से.मी. की दूरी पर कंदों को 7 से.मी. गहरा बोते है।

[kkn ,o moZjd%&

आलू एक कंद वाली फसल है। अतः इसे अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। अतः उर्वरकों की मात्रा मृदा परीक्षण के आधार पर निर्धारित करना चाहिए साथ ही कंदीय फसल होने के कारण मृदा ढ़ीली होनी आवश्यक है। अतः भूमि में पकी हुई गोबर की खाद की 30–40 टन या 3–4 टन वर्मीखाद की मात्रा भूमि में प्रति हेक्टेयर की दर से रोपायी के करीब 1 माह पूर्व मिलायें जिसमें कि 2 कि.ग्रा. एजोस्पाईरीलियम भी मिलाकर डालें तथा कार्बनिक उर्वरकों के रुप में नत्रजन फास्फोरस व पोटाश की निम्न मात्रायें क्रमशः 100–180 कि.ग्रा. नत्रजन 50–70 किलोग्राम फास्फोरस व 70–100 किलोग्राम पोटाश भूमि में देवे ताकि सही उत्पादन प्राप्त हो सकें। नत्रजन की मात्रा को दो बार में देवें पहली बार दो तिहाई मात्रा को रोपाई पूर्व फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा के साथ व शेष नत्रजन की मात्रा को पहली सिंचाई के बाद भूमि में देवें। उपयुक्त आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए निम्न–लिखित खाद उर्वरको का उपयोग करें। जैसे यूरिया 391.3 कि.ग्रा., एम.ओ.पी. 166.7 कि.ग्रा., सिंगल सुपर फॉस्फेट 437.5 कि.ग्रा. या डी.ए.पी. 152.2 कि.ग्रा., यूरिया 331.8 कि. ग्रा., एम.ओ.पी. 166.7 कि.ग्रा. का उपयोग करें।

Çlpkà ,o tyfudkl%&

बुआई से पूर्व यदि खेत में नमी की कमी हो तो

पलेवा करके खेत तैयार करें और फिर रोपाई करें। आलू की खेती के लिए प्रथम सिंचाई कंद बुआई के 22–25 दिनों बाद करें जबकि पौधे 10 से.मी. तक ऊचाई वाले हो जायें सिंचाई करते समय खेत में जल भराव नहीं होना चाहिए। इसके बाद प्रत्येक 10–15 दिनों के अन्तर से सिंचाई करे तथा सिंचाई का पानी मेंड़ के केवल दो तिहाई भाग को ही गीला कर सकें आलू की खेती यदि हल्की भूमि में की जा रहीं हो तो 7–10 सिंचाई देवें और यदि भारी भूमि पर कर रहे है तो केवल 3–4 सिंचाई ही पर्याप्त होती है।यदि खेत में मावठा के समय अधिक वर्षा हो जाये तथा खेत में पानी भरा हो तो जल निकासीकी उचित व्यवस्था होनी चाहिये। साथ ही साथ यदि आलू के कन्द खोदने योग्य हो तो खुदाई से 20–22 दिनो पूर्व ही सिंचाई बन्द कर दें ताकि कन्दों का छिलका थोड़ा और कडा हो सके। जो कि भण्डारण अवधि के लिए अच्छा माना जाता है।

[kjirokj çcaèku%&

अत्याधिक सघन खरपतवारों से उपज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अतः समय–समय पर खरपतवारों जैसे बथुआ, मौथा, हिरण–खुरी आदि को खुर्पी की सहायता से बुवाई के 30 से 35 दिन पश्चात निकालते रहें एवं दूसरा रोपाई के 45 दिन बाद करें ऐसा करने के आलू के कंदों की बडवार के लिए पर्याप्त मिट्टी में भुरभुरापन एवं नमी की मात्रा बनी रहती है। परिणामस्वरूप आलू की फसल को सिंचाई की कम आवश्यकता एवं सिंचाई करते समय आलू के कंद पानी के बहाव से खुल जाने के कारण उन पर तेज धूप आने से कंदों का हरापन (सोलेनिन) का निर्माण रोका जा सकता है, जो कि आलू की गुणवत्ता एवं कंद भार में वृद्धि करने में सहायक है। यदि आवश्यक हो तो रासायनिक खरपतवारनाशियों का प्रयोग भी कर सकते है, जैसे मेट्राब्यूजन 0.75 किलो का 600 से 750 लीटर या ऑक्सीफ्लूरोफेन 0.5 लीटर 750 लीटर पानी में घोलकर खेत में आलू अंकुरण से पूर्व भूमि में नमी होने पर समान रूप से छिड़काव कर नियंत्रण किया जा सकता है। पैराक्वाट (ग्रेमेक्सोन), वासालीन, लासो आदि किसी एक खरपतवार –नाशी दवा की 1–1.5 लीटर मात्रा को 800 लीटर पानी में घोलकर रोपाई से 25–30 दिनों बाद छिड़काव करें।

feVVh p<kuk%&

आलू की कंदीय उपज मिटटी चढ़ाने की क्रिया से भी प्रभावित होती है। क्योंकि इससे खरपतवार निकालने के साथ –साथ जड़ो के लिये आवश्यक हवा की मात्रा भी बढ़ जाती है। यह कार्य इस प्रकार करे कि आलू के पौधा की जडे खुल न जाये अन्यथा कंद खुल जाने पर उनका रंग हरा हो जाता है। तथा उन्हे रसोई में पकाते समय वह अध पके ही रह जाते है। जो कि एक प्रकार के सोलेनिन नामक एल्कोलाइड के कारण होता है जो कि काफी जहरीला होता है। इसकी निर्धारित मात्रा 20 मि.ग्रा. 100 ग्राम से अधिक होने पर व्यक्ति इसे खाकर बीमार हो सकता है। इसीलिये कंदो पर मिटटी चढ़ाने का कार्य बुआई के 35 दिनों के अन्दर अवश्य ही कर लेवे।

jksx ,o dhV O;kfèk%&

1- vxsrh >qylk%& यह अल्टरनेरिया सोलेनाई नामक फफूँद जनित बीमारी होता है। यह रोग आलू के पौधों में कन्द बनने के समय से ही लगना शुरु हो जाता है। रोग निचली पत्तियों से शुरु होकर ऊपर की पत्तियों की ओर बढ़ता है। इस रोग से ग्रस्ति होने पर सबसे पहले पत्तियों पर छोटे–छोटे हल्के हरे रंग के धब्बे उभरते है। जो बाद में भूरे काले रंग के हो जाते है। सूखे हूए हिस्से पर उभरे हुए घेरे बनतेहै जिससे पत्तियाँ का सूखकर नीचे गिरना शुरु हो जाता है।

fu;a=.k gsrq%& कार्बेन्डाजिम्, मैंन्कोजेब दवा की 2.5 ग्राम /लीटर या कार्बेन्डाजिम 1.5 ग्राम पानी की दर से घोल बनाकर आलू की बुआई के 20–25 दिनो बाद पौधो पर अच्छे से छिड़काव करें। घोल की इस मात्रा को प्रथम छिड़काव के 12–15 दिनो बाद फिर कर सकते है और यदि आवश्यक हो तो 3–4 छिड़काव और भी किये जा सकते है।

2- fiNsyh >qylk%& आलू का यह रोग फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टैन्स नामक कवक के द्वारा फैलता है। इस रोग से ग्रसित पौधो की पत्तियों की किनारे पर छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते है। जो कि बाद में गहरे जलसिक्त धब्बे हो जाते हैं। तथा पौधे की पूरी पत्तियां मर जाती हैं। कार्बेन्डाजिम्, मैंन्कोजेब दवा की 2.5 मि.ग्रा. मात्रा प्रति लीटर या रिडोमिल गोल्ड 2.0 ग्राम/लीटर के हिसाब से बुआई के 20–25 दिनों बाद ही छिडक देवें। नाइट्रोजन की संस्तुत मात्रा का ही प्रयोग करें। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड, 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पौधें में प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने के लिए प्लाट फोर्टीफायर का प्रयोग करें,

आवश्यकतानुसार पुनः दोहरावें। संभव हो तो ऐसे क्षेत्रों में कुफरी ज्योति किस्म को लगावें।

3-vkyw dk 'kq"d foxyu%&

यह भी एक प्रकार की कवक फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम् ट्यूबरोसी से पैदा होती है। इसमें ग्रषित पौधों के तने कमजोर एवं पीले हो जाते है। तथा पत्तियाँ भी पीली पड़ जाती है। पौधों की जड़ो और तनों की नसें फट जाती है। तथा बन रहें नये कंद अंदर से भूरे पड़ जाते है।

jksdFkke%&

आलू को बीमारियों से बचाव हेतु निम्न प्रांरभिक उपाय अपनाएं ।

1.स्वस्थ और प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें।

2.ट्राइकोडर्मा, विरिडि 10 ग्राम प्रति किलो बीज में बीज उपचार करें।

3.कन्दों को बोने से पूर्व कार्बेन्डाजिम् मैंन्कोजेब दवा की 2.5 ग्राम / कि.ग्रा. बीज से उपचारित करें।

4.परिवहन एवं भण्डारण के समय कंदो को चोट से बचाना चाहिए।

4- dkyh #lh%&

आलू की काली रुसी नामक रोग भी कवक जनित है। जो कि रायजोक्टीनिया सोलेनाई नामक फफुँद से होता है। इस रोग से ग्रसित तनों का रंग भूरा, काला या गाढ़ा काला हो जाता है। पत्तियां मुरझा जाती है, और पूरा पौधा मर जाता है। मृदा में नमी की मात्रा अधिक होने से इससे रोग का प्रकोप बढ़ता है। इस रोग से ग्रसित होने पर आलू के कंदो के ऊपर भूरी काली पपड़ी आलू की सतह पर दिखाई देती है।

jksdFkke%&

1. बुवाई में पूर्व ताम्रयुक्त फफूंदनाशी 3 प्रति किलोग्राम बीज से उपचार करें।

2. स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का चयन करें।

3. कन्दों को बोने से पूर्व कार्बोसिन् थाइरम 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करें।

4. खेतों में जल निकास की अच्छी व्यवस्था करें।

5. जीवाणु मृदु विगलनः– यह रोग ईरबिनिया करटोबोरा नामक जीवाणु के द्वारा होता है, इसे जीवाणुजनित मृदु विगलन रोगित आलू के तने का रंग भूरा काला या गाढ़ा हो जाता है। पत्तियां मुरझाने लगती हैं। यह रोग मृदा में नमी की अधिकता से होता है।?

jksdFkke%&

1. स्वस्थएवं प्रमाणित बीजों का चयन करें।

2. सिंचाई गुढाई करते समय कंदों पर चोट नहीं लगना चाहिए।

3. रोग की रोकथाम के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन सल्फेट की 1.5 ग्राम दवा प्रति 10 लीटर पानी में घोल कर कंदों को आधे घंटे तक उपचारित करें।

dhV ,oa dhV fu;a=.k%&

dVoeZ %& नवविकसित इल्ली हल्के लम्बी होती है। पूर्ण विकसित इल्ली का सिर काला तथा शरीर की ऊपरी सतह हरी रंगत लिये गहरे भूरे रंग की होती है। इसके शरीर की लम्बाई 40–43 मि.मी. होती है।

{kfr çdkj%&

इसकी सुंडी हानिकारक होती है। सुंडिया रात्रि के समय पौधो की कोमल शाखाओं और तना को काटकर हानि पहुँचाती है। पौधो को जमीन की सतह से काटकर खाने की आदत के कारण इसे कटवर्म कहते है।

fu;a=.k%&

रात्रि के समय प्रकाश प्रपंच का उपयोग कर व्यस्क को नष्ट करे एवं खेत को खरपतवार मुक्त रखें। प्रकोप की अधिकता होने पर क्विनॉलफॉस 20 ई.सी. दवा की 2 मि.ली. या क्लोरोपाइरीफॉस 25 ई.सी. 3 मि.ली. या प्रोफेनोफॉस 50 सी. 2 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर की दर से सिंचाई जल के साथ दें।

lQsn yV%& वयस्क भृंग बडे आकार के ताम्बई रंग के तथा रात्रिचर होते है। गृब सफेद रंग की होती है। पूर्ण विकसित इल्ली का शरीर मोटा, मटमैला तथा अंग्रेजी के "सी" आकार में मुड़ा होता है।

{kfr dk çdkj%&

इस कीट की ग्रब तथा व्यस्क भृंग दोनों अवस्थायें हानिकारक होती है। व्यस्क भृंग पत्तियों को खाते है। गृब पौधो की जड़ों में रहकर हानि करती है। जिससे पौधा सूखकर नष्ट हो जाता है।

Çu;a=.k%&

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें एवं व्यस्क भृंगों को

प्रकाश प्रपंच से आकर्षित कर नष्ट करे। गृसित खेतों में बोनी के पूर्व क्विनालाफॉस 5 प्रतिशत दानेदार दवा की 30 कि.ग्रा. मात्रा या क्लोरोपाइरीफॉस 2.5% दानेदार 16 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

,ihyduk Hkx& यह कीट आकार में छोटा पीलापन लिये हुए गहरा हरा रंग लिये हुए होता है। इसकी ऊपरी पीठ का हिस्सा कुछ उठा होता है। जिस पर छोटी–छोटी बिन्दु पाये जाते है। इस कीट की दोनों अवस्थायें हानिकारक होती है। इस कीट के शिशु पत्तियॉ तथा तने दोनो अवस्थायें हानिकारक होती है। इस कीट के शिशु पत्तियॉ तथा तनों दोनो को ही खुरचकर खाते है। इसकी रोकथाम हेतु क्लोरपायरीफॉस चूर्ण का 5% मात्रा की 20–25 किलोग्राम/हेक्टेयर बुआई से पूर्व खेत में मिलाये। फसल चक्र अपनाये तथा पर्याप्त नमी खेत में रखें।

ekg&

igpku fpUg&

माहू कोमल शरीर वाले छोटे हल्के हरे रंग के कीट होते है। इनका शरीर नाशपाती के आकार के समान होता है। सिर के ऊपरी भाग के दो संयुक्त नेत्र पाये जाते है। इसके साथ ही साथ इनमें पारदर्शक पंख पाये जाते है। जो कि एक स्थान से दूसरे स्थान पर परिवहन में मदद करते हैं।

{kfr dk çdkj&

इस कीट के शिशु एवं व्यस्क दोनो ही हानिकारक होते है। जो कि रस चूसकर हानि पहुँचाते है। ग्रसित पत्तियॉ मुड़ी हुई दिखाई देती है। इनके द्वारा स्त्रावित मधुरस पत्तियों पर काली फफूंद के पनपने में सहायक होता है। जिससे कि पौधों को प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में बाधा होती है।

fu;=.k&

आलू की बोनी जल्दी करे एवं जल्दी पकने वाली किस्मों को लगाये कीट प्रकोप होने पर डायमिथोएट 30 ईसी की 2 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 200 एस.एल. या 0.4 या 0.5 मि.ली. प्रति लीटर या थायोमिथाक्जाम 25 डब्ल्यू.जी. 0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आलू के कीट संक्रमित पौधों को काटकर या उखाड़कर खेत से बाहर गडडा खोदकर बंद कर दें।

ckt kj gr r ;kjh&

खुदाई के बाद आलुओं को 4–5 दिनो तक ढेर बनाकर छायादार स्थान पर रख देते है। एसा करने से कन्दों के ऊपर लगी हुई मिट्टी साफ होने के साथ–साथ उनका छिलका भी सख्त हो जाता है। बाजार में ले जाने से पूर्व कन्दों का श्रेणीकरण कर लेना चाहिए। जिससे कि उचित मूल्य मिल सके।

Hk.Mkj.k&

शीत गृहों में आलू के कन्दों को 3–4.4 से. ग्रे. तथा 85प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता पर 34 सप्ताह तक सुरक्षित रखा जा सकता है। भारत में आलू अनुसंधान हेतु 7 क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र कार्यरत है। जिसका एक उपकेन्द्र ग्वालियर में स्थित है जहां से किसान अपनी इच्छानुसार आलू किस्मों को प्राप्त कर सकते है ।

ukV& आलू फसल में किसी भी प्रकार के रासायनिक खादों दवाओं (खरपतवारनाशी, कीटनाशी, रोगनाशी) का प्रयोग करने से पूर्व अपने नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र से अवश्य संपर्क करें। ताकि उपज में किसी भी प्रकार की हानि से बचा जा सके

ट्राइकोडर्मा एक उपयोगी सूक्ष्मजीव

vk'kk dqekjh[1]] fodkl 'kekZ[2] ,oa ,-d- 'kekZ[3]

[1]जैव–प्रौद्योगिकी विभाग, कृषि महाविद्यालय, जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय, गुजरात
[2]जैव–प्रौद्योगिकी विभाग आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग,
[3]राष्ट्रीय बीज परियोजना, एस. के. राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान

मिट्टी में कवक की अनेक प्रजातियाँ पायी जाती है इनमें से कुछ प्रजातियाँ लाभदायक मित्र कवक भी हैं जैसे कि ट्राइकोडर्मा, कवक की एक प्रजाति है जो पौधों के जड़ विन्यास क्षेत्र (राइजोस्फियर) में कार्य करने वाला सूक्ष्मजीव है। यह एक अरोगकारक मृतोपजीवी कवक है जो प्रायः सभी प्रकार की मिट्टी में कार्बनिक अवशेषों पर पाया जाता है। इसकी कई प्रजातियाँ अनेक पौधों की प्रजातियों के साथ पारस्परिक अन्तः पादपी संबंध बनाने की क्षमता रखती है।मिट्टी में फफूदों के द्वारा उत्पन्न होने वाले अनेक प्रकार की पादप रोगों के प्रबंधन के लिए यह एक महत्वपूर्ण कवक है। यह मृदा में उपयोग होता है एवं वृद्धि करता है तथा जड़ क्षेत्र के पास पौधों एवं फसल की नर्सरी अवस्था से ही रक्षा करता है। ट्राईकोडर्मा की लगभग 6 प्रजातियाँ ज्ञात हैं लेकिन केवल दो ही प्रजातियाँ ट्राईकोडर्मा विरिडी व ट्राईकोडर्मा हर्जीयानम मिट्टी में अधिकतर मिलते है। यह फसलों के लिए हानिकारक फफूंदों को नष्ट कर के विभिन्न रोगों पर नियंत्रण में सहायक हैं। यह कृषि की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी एक जैव कवकनाशी है जो विभिन्न प्रकार की कवक जनित बीमारियों को रोकने में मदद करता है, जिससे रासायनिक कवकनाशी के ऊपर निर्भरता कम होती है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से रोगजनकों की रोकथाम के लिये किया जाता है तथा प्राकृतिक रूप से सुरक्षित माना जाता है क्योंकि इसके उपयोग का प्रकृति पर कोई दुष्प्रभाव देखने को नहीं मिलता है।

V™kbdkMekZ dh c<rh ykdfç;rk&

वैश्विक स्तर पर जैविक फलों एवं सब्जियों की बढ़ती मांग को देखते हुए कृषि के क्षेत्र में जैव–कवकनाशकी के उपयोग मे वृद्धि हुई हैं, पिछ्ले कुछ दशकों में कृषि मे रासायनिक फफूंदनाशकों का अधिक प्रयोग हुआ हैं, जो फसल को फफूंद रोगजनकों से बचाने का सबसे लोकप्रिय तरीका है। हालांकि रासायनिक फफूंदनाशक की उच्च प्रभावशीलता के साथ–साथ मानव और पशु स्वास्थ्य पर इसका बुरा असर भी पड़ता हैं। इसके साथ ही पर्यावरण, भूजल, मिट्टी, ओर हवा भी प्रदूषित होती हैं। रासायनिक फफूदनाशकों के दुरुपयोग के कारण रोगजनकों की प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती हैं। साथ ही लाभकारी कीट जैसे मधुमक्खी, परागणकर्ताओ मृदा सूक्ष्मजीवों, और स्थलीय और जलीय पारिस्थितिक तंत्र की सामान्य स्थिति पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

V™kbdkMekZ o`gnRiknu fof/k&

ट्राइकोडर्मा के वृहदत्पादन में गोबर का प्रयोग करते हैं। इसके लिए खेत में छायादार स्थान पर 28 किलो ग्राम गोबर में पर्याप्त पानी मिलाकर शुद्ध कल्चर 60 ग्राम मिलाया जाता हैं। इस ढेर को अच्छी तरह ढक कर ऊपर से पानी से भिगो देते हैं। समय–समय पर पानी का छिड़काब करने से उचित नमी बनी रहती है।12 से 16 दिनों के बाद ढ़ेर को अच्छी तरह से मिलाते हैं और पुनः ढ़क देते है। फिर पानी का छिड़काव समय–समय पर करते रहते हैं। लगभग 18 से 20 दिनों के बाद हरे रंग की फफूंद ढ़ेर पर दिखाई देने लगती है। लगभग 28 से 30 दिनों में ढेर पूर्णतया हरा दिखाई देने लगता है। अब इस ढेर का उपयोग मृदा उपचार के लिए कर सकते हैं ।

इस प्रकार किसान अपने खेत पर सरल, सस्ते व उच्च गुणवत्ता युक्त ट्राइकोडर्मा का वृहदत्पादन कर सकते है। नया ढेर पुनः तैयार करने के लिए पहले से तैयार ट्राइकोडर्मा का कुछ भाग रख लिया जाता हैं और इस प्रकार इसका प्रयोग नये ढेर के लिए मदर कल्चर के रूप में कर सकते हैं। जिससे हमें मदर कल्चर बाहर से नही लेना पड़ेगा।

VªkbdkMekZ ds ç;kx ls dqN eq[; jksxksa dk çcU/ku&

- तिलहनी व दलहनी फसलों में उकठा रोग।
- अदरक का प्रकंद विगलन।
- कपास का उकठा, आद्रपतन, सूखा, जड़गलन विगलन।

- चुकन्दर का आद्रपतन।
- मूगंफली में कालर राट।
- फूलों में कार्म सड़न।
- सब्जियों में आद्रपतन, उकठा,जड़गलन।

VkbdksMekZ dk ç;ksx dh fofèk& ट्राइकोडर्मा को विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है। इससे बीज उपचार, मिट्टी का उपचार, जड़ के उपचार के साथ फसलों में छिड़काव भी कर सकते हैं।

VkbdksMekZ dk ç;ksx dh fofèk

1- cht mipkj% बीजोपचार के लिये प्रति किलो बीज में 5–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर (फार्मूलेशन) जिसमें 2 ग्राम 106 सी.एफ.यू. प्रति ग्राम होता है, को मिश्रित कर छाया में सुखा लें फिर बुवाई करें।

2- dan mipkj% 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा 1 लीटर पानी में डालकर घोल बना लें फिर इस घोल में कंद को 30 मिनट तक डुबाकर इसे छाया में आधा घंटा रखने के बाद बुवाई करें।

3- cht çkbZfeax% बीज बुवाई से पहले खास तरह के घोल की बीजों पर परत चढ़ाकर छाया में सुखाया जाता है। ट्राइकोडर्मा से सीड प्राइमिंग करने हेतु गाय के गोबर का गारा (स्लरी) में प्रति लीटर 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा उत्पाद मिलाएँ और इसमें लगभग एक किलोग्राम बीज डुबोकर रखें। यह प्रक्रिया खासकर अनाज, दलहन और तिलहन फसलों की बुवाई से पहले की जानी चाहिए।

4- e`nk 'kksèku% एक किलोग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर को 25 किलोग्राम कम्पोस्ट (गोबर की खाद) में मिलाकर एक सप्ताह तक छायादार स्थान पर रखकर उसे एक एकड़ खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दें फिर बुवाई करें।

5- ulZjh mipkj% बुवाई से पहले 5 ग्राम ट्राइकोडर्मा उत्पाद प्रति लीटर पानी में घोलकर नर्सरी बेड को भिगोएँ।

6- dye vkSj vadqj ikèkksa dh tM+ Mqcdh% एक लीटर पानी में 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा घोल लें और कलम एवं अंकुर पौधों की जड़ों को 10 मिनट के लिये घोल में डुबोकर रखें, फिर रोपण करें।

7- ikèkksa ij fNM+dko% कुछ खास तरह के रोगों जैसे पर्ण चित्ती, झुलसा आदि की रोकथाम के लिये पौधों में रोग के लक्षण दिखाई देने पर 5–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

VkbdksMekZ dk ç;ksx ls ykHk&

- यह रोगकारक जीवों फ्यूजेरियम, पिथियम, फाइटोफ्थोरा, राइजोक्टोनिया, स्क्लैरोशियम, स्कलैरोटिनिया आदि फफूंदों की वृद्धि को रोकता है या उन्हें नष्ट कर पौधों को रोग मुक्त करता है।
- यह पौधों में रोगकारकों के विरुद्ध तंत्रगत अधिग्रहित प्रतिरोधक क्षमता (सिस्टेमिक एक्वायर्ड रेसिस्टेन्स) की क्रियाविधि को सक्रिय करता है। यह मृदा में कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की दर बढ़ाता है अतः यह जैव उर्वरक की तरह काम कर मिट्टी की उर्वरक क्षमता बढ़ाता है।
- यह पौधों के फलों की पोषक तत्वों की गुणवत्ता, खनिज तत्व और एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि को बढ़ाता है।
- ट्राइकोडर्मा का उपयोग करने से कीटनाशकों, वनस्पतिनाशकों से दूषित मिट्टी के जैविक उपचार (बायोरिमेडिएशन) में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें विविध प्रकार के कीटनाशक जैसे ऑरगेनोक्लोरिन, ऑरगेनोफास्फेट एवं कार्बोनेट समूह के कीटनाशकों को नष्ट करने की क्षमता होती है।
- बीज एवं जड़ों को उपचारित करने से पौधों को विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाया जा सकता है।

VkbdksMekZ dk mi;ksx

- विभिन्न कृषि कार्यों में ट्राइकोडर्मा का उपयोग किया जाता है।
- मिट्टी तथा बीज उपचारित करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है।
- खेत में बुंवाई से पहले नर्सरी में तैयार किए गए पौधों की जड़ों को ट्राइकोडर्मा से उपचारित किया जाता है।
- खड़ी फसलों में भी विभिन्न प्रकार के रोगों पर नियंत्रण के लिए इसका प्रयोग किया जाता है।

VkbdksMekZ dSls dke djrk gS

ट्राइकोडर्मा फसलों के लिए हानिकारक फफूंदों को नष्ट करने के साथ ही विभिन्न प्रकार के रोगों पर नियंत्रण में सहायक हैं। रासायनिक कवकनाशी के कई दुष्प्रभाव होते हैं लेकिन ट्राइकोडर्मा के प्रयोग से फसलों पर किसी तरह का नुकसान नहीं होता है।

l koèkkfu ;k&

अच्छे परिणाम के लिए किसी प्रमाणित संस्थान या कंपनी से ट्राइकोडर्मा खरीदना चाहिए।

मिट्टी में ट्राइकोडर्मा का उपयोग करने के 4—5 दिन तक रासायनिक फफूंदीनाशक का उपयोग नहीं करना चाहिए।

सूखी मिट्टी में ट्राइकोडर्मा का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि इसके विकास एवं वृद्धि के लिए उपयुक्त नमी बहुत आवश्यक है।

ट्राइकोडर्मा द्वारा उपचारित बीज को छायादार स्थान पर रखना चाहिए।

ट्राइकोडर्मा उपचारित गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद या वर्मी कम्पोस्ट में मिलाने के बाद इसे अधिक समय तक नहीं रखना चाहिए।

fu"d"kZ&

ट्राइकोडर्मा कृषि—पारिस्थितिकी तंत्र में लाभकारी सूक्ष्म जीवों में से एक है जो मिट्टी के स्वास्थ्य और फसल को प्रभावित करता है। पादप रोगजनक सूक्ष्म जीवों के साथ इसकी प्रतिकूल गतिविधियां इसे कृषि क्षेत्र में उपयोग के लिए अधिक विश्वसनीय बनाती है। हालाँकि, इसका उपयोग ना केवल रोगरोधी गतिविधि बल्कि जैव उर्वरक, पौधों के विकास को बढ़ावा देने, बायोरेमेडिएशन और जैविक एवं आर्थिक उपज दोनों में फसल की उपज में वृद्धि के रूप में भी कार्य करता है। इस प्रकार, ट्राइकोडर्मा का उपयोग कृषि क्षेत्र में हानिकारक रसायनों के उपयोग को कम करके टिकाऊ कृषि के लिए कारगर उपाय है।

Vªkbdksmekz cht mipkj

क्षारीय भूमि सुधार में नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद की भूमिकाः एक सतत विकल्प

ik#y lUèkk] fç;dk pæk] fueZyn clkd ,oa vjfoUn dqekj jk;
भाकृअनुप–केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा–132001

बढ़ता शहरीकरण और बदलती जीवन शैली के परिणामस्वरूप हमारे देश में अपशिष्ट कचरे की मात्रा में वृद्धि हुई है, अतः इसका प्रबंधन करने की आवश्यकता है। अपशिष्ट प्रबंधन इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि इसके पर्यावरण और स्वास्थ्य पर कई प्रभाव पड़ते हैं। ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की वर्तमान स्थिति के परिणामस्वरूप उत्पन्न पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य संकट को दूर करने एवं निकट भविष्य में आने वाली चुनौतियों का समाधान करने हेतु एक दीर्घकालिक रणनीति तैयार करने की आवश्यकता है।

Hkkjr esa vif'k"V çcU/ku dh orZeku fLFkfr

प्रतिवर्ष भारत 62 मिलियन टन अपशिष्ट उत्पन्न करता है। इनमें से 70 प्रतिशत ही एकत्र किया जाता है, जिसमें से लगभग 12 मिलियन टन को उपचारित किया जाता है और शेष 31 मिलियन टन को लैंडफिल स्थलों पर डंप कर दिया जाता है। यह अनुमानित है कि वर्ष 2030 तक शहरी नगरपालिका ठोस अपशिष्ट उत्पादन बढ़कर 165 मिलियन टन हो जाएगा। भारत सरकार की स्वछता अभियान के तहत सभी प्रकार के अपशिष्टों को गीले कचरे या जैव–निम्नीकरणीय और सूखे कचरे या गैर–जैव–निम्नीकरणीय के दो समूहों में बाँटा जा सकता है।

Hkkjr esa vif'k"V çcU/ku esa çeq[k pqukSfr;k¡

भारत में अपशिष्ट का प्रबंधन एक मुख्य चुनौती के रूप में उभर रहा है। इसके कुछ पहलुओं को यहाँ रखा गया है–

- अपशिष्ट प्रबंधन के लिए अधिकांश क्षेत्रों में ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के लिए उचित प्रबंधन रणनीति की आवश्यकता है और प्रशासनिक सहयोग की अपेक्षा है।
- कचरे के संग्रहण और पृथक्करण के लिए उचित श्रम आवंटन की आवश्यकता है।
- अपशिष्ट पृथक्करण का अभाव घरेलू कचरे के पृथक्करण के बारे में आबादी के एक बड़े हिस्से में जागरूकता का अभाव है।
- भारत के अधिकांश शहरों का अपशिष्ट खाली क्षेत्रों में फेंक दिया जाता है जिससे आसपास के क्षेत्र में पर्यावरण प्रदूषण होता है और कई स्वास्थ्य संबंधी खतरे उत्पन्न करता है। ठोस अपशिष्ट में कुछ विषैले पदार्थ भी पाए जाते है जो बहुत कम या सूक्ष्म मात्रा में भी तीव्र या तत्कालिन प्रभाव डालते है तथा मृत्यु या भयानक रोगों के कारण बन सकते हैं। अधिकांश घातक अपशिष्टों का भूमि पर या भूमिगत निबटारा किया जाता है जिससे भूमिगत जल का प्रदूषण गंभीर समस्या है।

enk esa vif'k"V [kkn ds ykHk

uxjh; Bkl vif'k"V [kkn }kjk yo.k–{kkjh; enk l|/kkj

कृषि उत्पादकता में सुधार के लिए लवणीय–क्षारीय भूमि का पुनर्वास आवश्यक है, जिससे राष्ट्रीय खाद भंडारण में भी योगदान होगा। लवणीय–क्षारीय भूमि में आवश्यक पोषक तत्व और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है जिसका सुधार कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए आवश्यक है। अपशिष्ट खाद में मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को सुधारने की क्षमता है। इसके अतिरिक्त, अपशिष्ट खाद आवश्यक पोषक तत्व (जैसे कि नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटाश) तथा अन्य द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करती है। इस तरह के भूमि के सुधार के लिए जिप्सम का प्रयोग किया जाता है परन्तु इसकी निरंतर बढ़ती मांग के कारण वैकल्पिक मृदा सुधार घटकों की खोज की जा रही है। नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद के उपयोग से क्षारीय मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार की क्षमता है। पारंपरिक संशोधन जिप्सम GR25 (जिप्सम की अवश्यकता 25%), GR50%, गोबर की खाद और नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद (10 और 20 टन प्रति हेक्टेयर) के प्रयोग से लवणीय–क्षारीय भूमि सुधार संभव है।

uxjh; Bkl vif'k"V [kkn d ç;kx l yo.kh;&{kkjh; Hkfe l|/kkj

शहरी ठोस अपशिष्ट, एक अपशिष्ट प्रकार है जिसमें मुख्य रूप से घर का कचरा (घरेलू अपशिष्ट) एवं अन्य अनुपयोगी वस्तु शामिल होती है। इसे एकत्र करने का कार्य मुख्य रूप से नगरपालिका के द्वारा किया जाता है। केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल में भी नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद के प्रयोग से लवण–क्षारीय भूमि के सुधार पर अनुसंधान किया गया है। इस प्रकार की मृदा के सुधार के लिए जिप्सम, पशु खाद, हरी खाद, औधोगिक अपशिष्ट उत्पाद आदि का प्रयोग किया जाता है। जैव अपक्षीणन योग्य नगरीय ठोस अपशिष्ट अन्य विकल्प हैं। मृदा में ठोस अपशिष्ट के उपयोग से अपशिष्ट के प्रबंधन में भी सहायता मिलेगी। नगरीय ठोस अपशिष्ट के प्रयोग से क्षारीय मृदा का पीएच और विधुत चालकता दोनों में कमी आंकी गयी और धान–गेहूं की पैदावार में वृद्वि दर्ज की गयी। क्षारीय मृदा के सुधार में पानी कीगुणवत्ता का भी महत्वपूर्ण योगदान है। अतः यह जरूरी है कि लवणीय क्षारीय भूमि कीसिंचाई के समय पानी के एसएआर को ध्यान में रखा जाए।

yo.k çHkkfor enk e uxjh; Bksl vif'k"V [kkn ds ç;kx ls Qly dh iSnkokj

बहुत से क्षेत्रों में मृदा के साथ–साथ सिंचाई जल की भी निम्न गुणवत्ता होती है, वहाँ भी जिप्सम के साथ अपशिष्ट खाद के प्रयोग से किसान धान और गेहूँ की फसल की पैदावार बिना उपचार की तुलना में 2–4गुना अधिक प्राप्त कर सकते है।इसके मृदा में प्रयोग के दौरान ध्यान रखने योग्य सावधानियाँ यह है कि अपशिष्ट खाद के प्रयोग से पहले इसके भौतिक और रासायनिक गुणों की जाँच विस्तार से कर लेना आवश्यक होता है और भारी धातुओं (क्ए ब्ए च्इऔरछप) की मात्रा तय सीमा के अंतर्गत ही रहे।खाद से पौधों को अधिकतम पोषक तत्व उपलब्ध कराने का वैज्ञानिक तरीका कृषि को और मजबूत कर सकता है। शहरी अपशिष्ट खाद के उपयोग से रासायनिक उर्वरकों के उपयोग पर निर्भरता कम होगी। इससे मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने की लागत कम करने, उत्पादकता बढ़ाने और पर्यावरण संरक्षण में मदद मिलेगी। अलग–अलग जैविक कचरे को खाद के रूप में उपयोग करने से आसपास के क्षेत्र में ठोस कचरे के एकत्रीकरण को कम करने में मदद मिलेगी और इसके प्रबंधन पर होने वाला अतिरिक्त खर्च भी बचेगा।

vkxs dh jkg

वर्तमान समय में जैविक अपशिष्ट की खाद के प्रयोग के लिए निरंतर जागरूकता आई है। गत वर्षो में मीडिया,समाचार पत्रों, सरकारी संस्थानों द्वारा अभियान आदि ऐसे बहुत से प्रयास किये भी जा रहे है। खाद से पौधों को अधिकतम पोषक तत्व उपलब्ध कराने का वैज्ञानिक तरीका कृषि को और मजबूत कर सकता है। शहरी अपशिष्ट खाद के उपयोग से रासायनिक उर्वरकों के उपयोग पर निर्भरता कम होगी। इससे मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने की लागत कम करने, उत्पादकता बढ़ाने और पर्यावरण संरक्षण में मदद मिलेगी। अलग–अलग जैविक कचरे को खाद के रूप में उपयोग करने से आसपास के क्षेत्र में ठोस कचरे के एकत्रीकरण को कम करने में मदद मिलेगी और इसके प्रबंधन पर होने वाला अतिरिक्त खर्च भी बचेगा। किसी भी प्रकार के उत्पादन के पुनर्चक्रण एवं अंतिम निपटान का दायित्व पूर्ण रूप से निर्वाह होना चाहिए और चक्रीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना चाहिए। विकेंद्रीकृत अपशिष्ट प्रबंधन एक अन्य विकल्प है जिससे एक इकाई पर अधिक कार्य नहीं होगा और अपशिष्ट प्रबंधन का स्थानीय समाधान भी हो सकेगा। भारत में स्वच्छ भारत अभियान और ठोस कचरा प्रबंधन के नियम (संशोधित) 2016 के तहत काफी प्रयास किया है और जन सहयोग, जन प्रशिक्षण और सरकारी सक्रियता का भी योगदान है।

> हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषा की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।
>
> –मैथिलीशरण गुप्त

लौकी के रोग एवं कीटों का प्रबंधन

Kku.Uæ çrki frokjh] jkgrk'k flag Hknkfj;k] lq'khy dqekj] lo'k f=ikBh ,o vkfnR; çrki jkBkSj

कृषि विज्ञान केन्द्र जावरा, जिला रतलाम, मध्य प्रदेश

लौकी एक व्यापक रुप में उगाई जाने वाली सब्जी की प्रमुख फसल है। यह शरीर के विभिन्न विकार के लिए लाभदायी होती है और यह कीट एवं रोगों के प्रति बहुत ही सवेंदनषील होती है। इसकी वृद्धि, उपज एवं उसकी गुणवत्ता पर प्रभाव डालती है। लौकी सामान्यतः दो आकार की होती है] पहली – लम्बी, दूसरी –गोलाकार होती है। इसका प्रयोग सब्जी को छोड़कर हलवा एवं रायता के लिए भी किया जाता है। इसमें प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट, खनिज लवण, खाद्य रेशा के अलावा प्रचुर मात्रा में सभी प्रकार के पोषक तत्व पाये जाते है।

jkx

1- xyu jkx– यह फफूंदजनित रोग है, जिसका मुख्य कारक फाइटोफ्थोरा पैरासिटिका है। इस रोग के कारण पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बें बन जाते है, जो वर्षाकाल के समाप्त होने के बाद भी रहते है। जिसके कारण फसल को बहुत नुकसान होता है।

jkdFkke

(1) किसानों को हमेशा प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए ।

(2) बीज उपचार करके किसानों को बुवाई करना चाहिए।

(3) ट्राइकोडर्मा विर्डी 10 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करें।

(4) कार्बेण्डाजिम 12 प्रतिशत+ मेन्कोजेब 63 प्रतिशतडब्लयू. पी. 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करना चाहिए ।

2- pf.kZy vkflrk& यह फफूंदजनित रोग है। जिसका मुख्य कारक इरीसायफी सिकोरेसेरम द्वारा होता है। इसमें पत्तियों पर सफेद रंग के चूर्णिल धब्बें पत्तियों पर दिखाई देते है। यह रोग प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों के तने एवं नई ग्रोथ वाली सतहों पर फैला रहता है। जिसके कारण धब्बें कोणीय व पीले होते है। नमी वाले स्थानों पर इनके धब्बें, निचले भागों पर भी होते है।

jkdFkke

(1) कार्बेण्डाजिम 12 प्रतिशत+ मेन्कोजेब 63 प्रतिशतडब्लयू. पी. 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करना चाहिए।

(2) डिनोकॉप 1.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(3) कैराथियान एल.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(4) सल्फेक्स 0.2 प्रतिशतप्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

3- enjkfey vkflrk यह रोग लौकी के पौधों की पत्तियों पर पीले या भूरे रंग के दिखाई देने लगते है। पत्तियों की ऊपरी सतहों पर छोटे पीले या हल्के रंग के धब्बें दिखाई देते है, जो बाद में पूरे तरह से भूरे हो जाते है। जिसके कारण पत्तियां मुरझाने लगती है एवं फफूंद की परत पत्तियों पर दिखाई देने लगती है। जिसमें पौधा पीला पड़कर सूखने लगता है। पौधों की बढ़वार भी रूक जाती है। ज्यादा रोग की अवस्था में पूरी पत्तियां या तो सूख जाती है या उसका एक भाग सूखकर मर जाता है।

çfr'kr eq

jkdFkke

(1) किसानों को हमेशा प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए ।

(2) खेतों से खरपतवार को नियंत्रित करें।

(3) रोग दिखने के बाद क्लोरोथेलोनिल 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(4) रिडोमिल एम.जेड. 72 मि.ली प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

4- iÙkh /kCck jkx& यह रोग कद्दूवर्गीय सभी फसलों में होता है। जो धब्बें पहले शुरूवाती अवस्था में गोल आकार के बन जाते है और बाद में वह धीरें–धीरें विकसित होकर बड़े आकार के बन जाते है। जिससे पत्तियों पर छेद बन जाता है और कोणीय पत्ता धब्बा पनप जाते है।

jkdFkke&

(1) किसानों को हमेशा प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए ।

(2) बीज उपचार करके किसानों को बुवाई करना चाहिए।

(3) ट्राइकोडर्मा विर्डी 10 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करें।

(4) कार्बेण्डाजिम 12 प्रतिशत + मेन्कोजेब 63 प्रतिशत डबल यू.पी. 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करना चाहिए ।

5- oDVhfj;y yhQ LikV& इस रोग के लक्षण पौधों की निचली सतह पर छोटे–छोटे धब्बें के रूप मे दिखाई देते है। जिसके बाद धीरे – धीरे पत्तियों की उपरी सतह पर भी पीलापन दिखाई देने लगता है, बाद में ये धब्बें बड़ा आकार ले लेते है और बीमारी धीरे – धीरें उग्र रूप ले लेती है।

jkdFkke&

(1) किसानों को हमेशा प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए ।

(2) बीज उपचार करके किसानों को बुवाई करना चाहिए।

(3) कार्बेण्डाजिम 12 प्रतिशत + मेन्कोजेब 63 प्रतिशत डब्लयू.पी. 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करना चाहिए।

(4) 0.01 प्रतिशत की दर से स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(5) कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

6- ykdh ek t d& यह रोग मुख्य रूप से चूसने वाले कीड़ो के द्वारा फैलता है।जिसमें सबसे ज्यादा एफिड के द्वारा यह रोग प्रसारित होता है। जो कि विषाणु को फैलाता है, जिसके कारण पत्तियों पर अनियमित आकार के हल्के रंग के धब्बें हो जाते है। संक्रमित फल दूसरे फलों की तुलना में छोटे रह जाते है ।

jkdFkke

(1) रोग ग्रसित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए या जमीन में गाड़ देना चाहिए ।

(2) नीम का तेल 1500 पी.पी.एम. 2 से 3 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(3) एसीफेट 1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(4) थायामिथाक्जॉम 0.2 प्रतिशत प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

dhV

1-yky dí chVy& इस कीट का प्रकोप कद्दूवर्गीय फसलों में सबसे ज्यादा होता है। लाल कद्दू बीटल पौधों की पत्तियों पर मुलायम शाखाओं को खाता है। लाल कद्दू बीटल अपनी सभी अवस्था में पौधों को नुकसान पहुचाता है, लेकिन मुख्य रूप से बीटल का व्यस्क पत्तियों और फूलों को खाती है। इस कीड़े का रंग नारंगी होता है, जिस पर कई धब्बें दिखाई देते है।

jkdFkke&

(1) अच्छे एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।

(2) कीड़े को मारने के लिए फसल की कटाई उपरांत खेत की गहरी जुताई करें।

(3) डाईक्लोवॉस 76 ई.सी.1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(4) एसीफेट 50 प्रतिशत + इमिडाक्लोरोप्रिड 1.8 प्रतिशत एस. पी. को 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

2-Qy eD[kh& यह लौकी का सबसे गंभीर कीट है, जो कि छोटे–छोटे फलों को ही नुकसान पहुचाने लगते है। जिसमें व्यस्क फल मक्खी फलों की त्वचा के नीचे अण्डे देती है। जिसकें बाद लौकी का फल खराब हो जाता है और लौकी की फसल को अत्याधिक हानि पहुचाते है।

jkdFkke&

(1) अच्छे एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।

(2) प्रभावित फल को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए ।

(3) नीम के तेल का 1500 पी.पी.एम. 3 से 5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(4) थायामिथाक्जॉम 0.2 प्रतिशत प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

(5) प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

प्राकृतिक खेती का जादू (कविता)

'kfä [ktfj;k
कृषि विज्ञान केन्द्र– पंचमहल,वेजलपुर, गोधरा
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

गोबर-गौमूत्र का हो मेल,
मिट्टी बने उपजाऊ खेल।

जीवामृत से बल जो आए,
फसलें लहर-लहर मुस्काए।

घन जीवामृत खाद बने,
धरती माँ फिर स्वस्थ तने।

निमास्त्र, अग्नि अस्त्र जब छिड़कें,
कीट-पतंगे दूर सिमटें।

ब्रह्मा अस्त्र का हो संचार,
फसल रहे निरोग, खुशहाल अपार।

दशपर्णी अर्क है चमत्कारी,
फसल रहे हरी, सुखकारी।

बीजामृत से बीज संवरें,
हरियाली से खेत निखरें।

सुंठास्त्र हो औषधि प्यारी,
खेती हो फिर लाभकारी।

प्राकृतिक खेती अपनाओ,
धरती माँ का मान बढ़ाओ!

शुष्क क्षेत्र में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत के उपयोग से लेट्यूस की खेती

vuhrk eh.kk] ,e- d: tkVo] vkj- lh- cykb] iztk /kyh] ,o vHk; dqekj
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

भारत के शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में जल की कमी, मिट्टी की उर्वरता में गिरावट तथा रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग के कारण कृषि उत्पादन निरंतर प्रभावित हो रहा है। ऐसी परिस्थितियों में प्राकृतिक खेती एक टिकाऊ एवं पर्यावरण अनुकूल कृषि पद्धति के रूप में उभरकर सामने आई है। यह खेती प्रणाली स्थानीय संसाधनों, जैविक पदार्थों एवं प्राकृतिक पोषक तत्वों के उपयोग पर आधारित होती है, जिससे उत्पादन लागत कम होने के साथ–साथ मिट्टी की गुणवत्ता में भी सुधार होता है। शुष्क क्षेत्रों में सब्जियों की खेती के लिए ऐसी तकनीकों की आवश्यकता है जो कम पानी में अधिक उत्पादन देने में सक्षम हों।

लेट्यूस (Lactuca sativa L-) एक महत्वपूर्ण पत्तेदार सब्जी है, जिसकी मांग वर्तमान समय में स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण तेजी से बढ़ रही है। इसमें विटामिन, खनिज तत्व, एंटीऑक्सीडेंट एवं फाइबर प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। होटल, रेस्टोरेंट, सुपरमार्केट एवं शहरी बाजारों में लेट्यूस की मांग लगातार बढ़ रही है, जिससे किसानों के लिए इसकी खेती लाभकारी व्यवसाय बनती जा रही है। शुष्क क्षेत्रों में इसकी सफल खेती हेतु जल संरक्षण एवं मिट्टी की नमी बनाए रखना अत्यंत आवश्यक होता है।

प्राकृतिक खेती के अंतर्गत ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत का उपयोग लेट्यूस उत्पादन के लिए अत्यंत प्रभावी तकनीक सिद्ध हो सकता है। राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्रों में भेड़ पालन व्यापक रूप से किया जाता है, जिससे बड़ी मात्रा में अनुपयोगी ऊन अपशिष्ट उपलब्ध होता है। यह ऊन मिट्टी में नमी संरक्षण, तापमान नियंत्रण एवं जैविक कार्बन बढ़ाने में सहायक होता है। दूसरी ओर, घन जीवामृत मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ाकर पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराता है। दोनों का संयुक्त उपयोग प्राकृतिक खेती को अधिक प्रभावी एवं टिकाऊ बनाता है।

ऊन अपशिष्ट का उपयोग मल्चिंग सामग्री के रूप में करने से मिट्टी में नमी लंबे समय तक बनी रहती है, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम हो जाती है। शुष्क क्षेत्रों में जहां पानी की उपलब्धता सीमित होती है, वहां यह तकनीक अत्यंत उपयोगी सिद्ध होती है। ऊन धीरे–धीरे विघटित होकर नाइट्रोजन एवं सल्फर जैसे पोषक तत्व भी उपलब्ध कराता है, जिससे पौधों की वृद्धि बेहतर होती है। इसके अतिरिक्त यह मिट्टी की संरचना में सुधार कर उसे भुरभुरी एवं उपजाऊ बनाता है।

घन जीवामृत प्राकृतिक खेती का एक महत्वपूर्ण घटक है, जिसे देशी गाय के गोबर, गौमूत्र, गुड़, बेसन एवं मिट्टी के मिश्रण से तैयार किया जाता है। यह लाभकारी सूक्ष्मजीवों का उत्कृष्ट स्रोत है, जो मिट्टी में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने में सहायक होते हैं। घन जीवामृत के प्रयोग से पौधों की जड़ों का विकास बेहतर होता है तथा पौधों की वृद्धि एवं हरितिमा में वृद्धि होती है। इसके नियमित उपयोग से मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ती है तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है।

लेट्यूस की खेती के लिए अच्छी जल निकास वाली दोमट मिट्टी उपयुक्त मानी जाती है। खेत की अच्छी तैयारी के बाद गोबर की सड़ी हुई खाद, ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत का प्रयोग करने से मिट्टी अधिक उपजाऊ बनती है। बीजों की बुवाई कतारों में उचित दूरी पर करनी चाहिए ताकि पौधों का विकास समान रूप से हो सके। शुष्क क्षेत्रों में ड्रिप सिंचाई पद्धति का उपयोग अधिक लाभकारी होता है, क्योंकि इससे कम पानी में अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। ऊन अपशिष्ट के उपयोग से मिट्टी की नमी लंबे समय तक बनी रहती है, जिससे सिंचाई अंतराल बढ़ जाता है और जल की बचत होती है।

प्राकृतिक खेती में खरपतवार एवं कीट प्रबंधन भी प्राकृतिक संसाधनों द्वारा किया जाता है। ऊन अपशिष्ट की मल्चिंग से खरपतवारों की वृद्धि कम होती है तथा मिट्टी का तापमान नियंत्रित रहता है। कीट एवं रोग नियंत्रण के लिए नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र एवं जीवामृत जैसे जैविक घोलों का प्रयोग किया जा सकता है। इससे रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता कम होती है तथा पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है।

शोध अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत के संयुक्त उपयोग से लेट्यूस

की वृद्धि, पत्तियों की संख्या, हरितिमा एवं गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार होता है। इसके साथ ही उत्पादन एवं बाजार मूल्य में भी वृद्धि देखी गई है। यह तकनीक मिट्टी में जैविक कार्बन एवं सूक्ष्मजीव गतिविधि बढ़ाने में सहायक होने के साथ–साथ जल उपयोग दक्षता में भी सुधार करती है।

आर्थिक दृष्टि से भी प्राकृतिक खेती आधारित लेट्यूस उत्पादन किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है। स्थानीय स्तर पर उपलब्ध ऊन अपशिष्ट एवं जैविक संसाधनों के उपयोग से उत्पादन लागत कम होती है तथा जैविक एवं रसायनमुक्त उत्पाद होने के कारण बाजार में बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। इससे किसानों की आय में वृद्धि होने के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी संभव हो पाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि शुष्क क्षेत्रों में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत का उपयोग लेट्यूस की टिकाऊ एवं लाभकारी खेती के लिए एक प्रभावी तकनीक है। यह तकनीक जल संरक्षण, मिट्टी की उर्वरता सुधार, गुणवत्तायुक्त उत्पादन एवं पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्रों में इस तकनीक को अपनाकर किसान कम लागत में अधिक उत्पादन एवं बेहतर आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

LokLF; d fy, yVîl d ykHk

लेट्यूस एक पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक पत्तेदार सब्जी है, जिसका नियमित सेवन शरीर को अनेक आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। इसमें विटामिन A, C, K, फोलिक अम्ल, कैल्शियम, आयरन, पोटैशियम एवं एंटीऑक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। कम कैलोरी एवं अधिक फाइबर होने के कारण यह स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों के लिए अत्यंत लाभकारी माना जाता है। लेट्यूस में उपस्थित विटामिन आंखों की रोशनी बढ़ाने एवं त्वचा को स्वस्थ रखने में सहायक होता है। इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट शरीर को फ्री–रेडिकल्स से बचाकर रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत बनाते हैं। विटामिन C शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करता है तथा संक्रमणों से बचाव में मदद करता है।

लेट्यूस में फाइबर की मात्रा अधिक होने के कारण यह पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके सेवन से कब्ज की समस्या कम होती है तथा पाचन क्रिया बेहतर होती है। यह शरीर में पानी की मात्रा बनाए रखने में भी सहायक होता है, क्योंकि इसकी पत्तियों में जल की मात्रा अधिक होती है। हृदय स्वास्थ्य के लिए भी लेट्यूस लाभकारी माना जाता है। इसमें उपस्थित पोटैशियम रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करता है तथा खराब कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में सहायक होता है। इसके नियमित सेवन से हृदय रोगों का खतरा कम हो सकता है। लेट्यूस वजन नियंत्रित करने में भी उपयोगी है, क्योंकि इसमें कैलोरी कम एवं फाइबर अधिक होता है। इसे सलाद के रूप में सेवन करने से पेट लंबे समय तक भरा हुआ महसूस होता है, जिससे अधिक भोजन करने की आदत कम होती है। इसलिए यह मोटापा नियंत्रण के लिए भी लाभकारी माना जाता है।

प्राकृतिक खेती द्वारा उत्पादित लेट्यूस रसायनमुक्त एवं अधिक सुरक्षित होता है। ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत के उपयोग से उगाई गई फसल में पोषक तत्वों की गुणवत्ता बेहतर होती है तथा रासायनिक अवशेषों का खतरा नहीं रहता। इस प्रकार प्राकृतिक रूप से उत्पादित लेट्यूस मानव स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभकारी एवं सुरक्षित खाद्य विकल्प सिद्ध होता है।

yVîl e ik, tkus oky ik"kd rRo

लेट्यूस एक अत्यंत पौष्टिक पत्तेदार सब्जी है, जिसमें विभिन्न प्रकार के विटामिन, खनिज तत्व, एंटीऑक्सीडेंट एवं आहार रेशा (Dietary Fiber) प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसकी पत्तियों में जल की मात्रा लगभग 90–95 प्रतिशत तक होती है, जिसके कारण यह शरीर को हाइड्रेट रखने में सहायक होती है। कम कैलोरी एवं अधिक पोषण मूल्य के कारण इसे "हेल्थ सलाद क्रॉप" भी कहा जाता है। लेट्यूस में विटामिन A की मात्रा अधिक होती है, जो आंखों की रोशनी, त्वचा स्वास्थ्य एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए महत्वपूर्ण है। इसमें बीटा–कैरोटीन पाया जाता है, जो शरीर में जाकर विटामिन A में परिवर्तित हो जाता है। विटामिन C की पर्याप्त मात्रा शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है तथा एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य कर कोशिकाओं को सुरक्षित रखती है। लेट्यूस विटामिन K का भी अच्छा स्रोत है, जो रक्त के थक्के बनने एवं हड्डियों की मजबूती के लिए आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त इसमें फोलिक अम्ल (Folic acid) पाया जाता है, जो गर्भवती महिलाओं एवं बच्चों के स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी माना जाता है। खनिज तत्वों की दृष्टि से लेट्यूस में कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम एवं पोटैशियम पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। कैल्शियम हड्डियों एवं दांतों को मजबूत बनाता है, जबकि आयरन रक्त में हीमोग्लोबिन निर्माण में सहायक होता है। पोटैशियम शरीर में रक्तचाप नियंत्रण एवं हृदय स्वास्थ्य बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्राकृतिक खेती के अंतर्गत ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत के उपयोग से उगाए गए लेट्यूस में पोषक

तत्वों की सांद्रता एवं गुणवत्ता में वृद्धि देखी गई है। ऊन अपशिष्ट मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ एवं नाइट्रोजन की उपलब्धता बढ़ाता है, जबकि घन जीवामृत लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ाकर पौधों द्वारा पोषक तत्वों के अवशोषण को बेहतर बनाता है। इसके परिणामस्वरूप पत्तियों में क्लोरोफिल, विटामिन एवं खनिज तत्वों की मात्रा अधिक पाई जाती है।

इस प्रकार प्राकृतिक खेती आधारित लेट्यूस न केवल उत्पादन की दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि पोषण एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण एवं सुरक्षित खाद्य विकल्प है।

yVîl dk çeq[k ik"kd rRo ,oa mudk ykHk

ik"kd rRo	LokLF; esa egRo
विटामिन A	आंखों की रोशनी, त्वचा एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है
विटामिन C	प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत करता है एवं एंटीऑक्सीडेंट का कार्य करता है
विटामिन K	रक्त का थक्का बनने एवं हड्डियों की मजबूती में सहायक
फोलिक अम्ल	कोशिका वृद्धि एवं गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक
कैल्शियम	हड्डियों एवं दांतों को मजबूत बनाता है
आयरन	हीमोग्लोबिन निर्माण एवं रक्त की कमी दूर करने में सहायक
पोटैशियम	रक्तचाप एवं हृदय स्वास्थ्य नियंत्रित करता है
मैग्नीशियम	मांसपेशियों एवं तंत्रिका तंत्र के लिए आवश्यक
आहार रेशा(फाइबर)	पाचन क्रिया सुधारता एवं कब्ज रोकता है
एंटीऑक्सीडेंट	शरीर की कोशिकाओं को क्षति से बचाते हैं
जल की मात्रा	शरीर में पानी की कमी नहीं होने देता

100 xzke rktk yVîl esa ik"kd rRoksa dh ek=k

?kVd	vuqekfur ek=k
जल	95 ग्राम
ऊर्जा	15 कैलोरी
प्रोटीन	1.4 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	2.9 ग्राम
फाइबर	1.3 ग्राम
कैल्शियम	36 मि.ग्रा.
आयरन	1.0 मि.ग्रा.
पोटैशियम	194 मि.ग्रा.
विटामिन C	9 मि.ग्रा.
विटामिन A	7405 IU

प्राकृतिक खेती के अंतर्गत ऊन अपशिष्ट एवं घन जीवामृत के उपयोग से उगाए गए लेट्यूस में पोषक तत्वों की गुणवत्ता एवं सांद्रता में वृद्धि देखी गई है। इससे फसल अधिक पौष्टिक, सुरक्षित एवं स्वास्थ्यवर्धक बनती है।

[kkr dh rS;kjh ,oa [kkr dk yxkmV

?ku thoke`r cukus dh fo/kh

ikdfrd [krh e oLV oy mipkj d vrxr fMi flpkb i.kkyh

ikdfrd [krh e oLV oy mipkj d vrxr fMi flpkb i.kkyh d vrxr yVl Qly in'ku

बीकानेर में खजूर पौधारोपण सारांश और संभावनाएं

j.k oek rnoky
सयुक्त निदेशक उद्यान, बीकानेर

बीकानेर और आस–पास के शुष्क ऊँटले क्षेत्रों में खजूर की खेती सफलतापूर्वक चल रही है। राजस्थान में खजूर के बड़े मॉडल फार्म और सेंटर ऑफ एक्सीलेंस (जैसे सागरा, भोजका जैसलमेर, खारा, बीकानेर) स्थापित हैं और राज्य में क्षेत्र तथा उत्पादन लगातार बढ़ रहे हैं। शुष्क जलवायु उच्च तापमान और उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था होने पर यह फसल कम पानी वाले अन्य फसलों की तुलना में आकर्षक आय दे सकती है। खजूर के फल पौष्टिक तत्वों से भरपूर और स्वादिष्ट होते हैं। इसके अतिरिक्त विटामिन ए–बी उपलब्ध रहते हैं। खजूर में कार्बोहाइड्रेट की प्रचुरता के कारण 01 किग्रा ताजा फलों में 3150 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। फलों को कच्चा (ताजा फल) मूलायम (पिण्ड खजूर) एवं सूखाकर (छुआरा) उपयोग में लाया जाता है। खजूर में पोषक खनिज लवणों की अधिकता होने के कारण यह शरीर में रोगरोधी क्षमता पैदा करती है। यह कैंसर रोग की तीव्रता को कम करती है। इसके प्रयोग से पाचन शक्ति बढ़ती है। हिमोगलोबीन की कमी व अन्धापन जैसी बीमारियों से बचाता है। खजूर को पोषण, दस्तावर व ऊर्जा के खोत के रूप में भी जाना जाता है। खजूर के फल खांसी, जुकाम व बुखार को कम करने में बहुत उपयोगी है। थार के रेगिस्तानी मौसम उच्च तापमान कम वर्षा खजूर के लिए अनुकूल हैं। सही जल प्रबंधन से प्रति हैक्टेयर अच्छा उत्पादन और आय संभव है। राजस्थान के कुछ हिस्सों में पहली फसल से लेकर कुछ वर्षों में किसानो की आय कई गुना बढ़ी बतायी गयी है। घरेलू मांग तथा आयात प्रतिस्पर्धा को देखते हुए भारत में स्थानीय उत्पादन बढ़ाने पर जोर है इसलिए बाजार व अनुदान दोनों पर उपलब्ध हो सकते हैं।

उपजाऊ, अच्छे जल निकास व 7–8 पीएच मान वाली बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त रहती है। ऊपरी 2 मीटर मृदा कठोरता व कंकड़ रहित होनी चाहिए। खजूर को लम्बी गर्म शुष्क ग्रीष्मऋतु तथा मध्यम सर्द ऋतु और फल पकते समय (जुलाई–अगस्त) वर्षा रहित जलवायु की आवश्यकता होती है। फूल आने व फल पकने के लिये उपयुक्त तापमान क्रमशः 25 एवं 40 डिग्री सैल्सियस होना चाहिये। कुल 3000 डिग्री दैनिक ऊष्मा ईकाई (आधार 10 डिग्री सै.) की फलों की पूर्ण परिपक्वता तक आवश्यकता होती है। ऊष्मा ईकाई योग फूल आने से फलों की पूर्ण परिपक्वता तक होनी चाहिये। यह अवधि शुष्क व वर्षा रहित होनी चाहिये। फलों की वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में वर्षा कम नुकसान पहुंचाती है परंतु उत्तरोतर अवस्था में अधिक नुकसान पहुंचाती है। अधिक समय तक हल्की वर्षा, कम अवधि के लिये घनी वर्षा से अधिक नुकसानदायक है। फूल आने से पहले व फलों के पकने तक खजूर को अत्यधिक पानी की आवश्यकता होती है, अतः सिंचाई का समुचित प्रबन्ध होना जरूरी है।

बीकानेर में प्रयोग की गयी सबसे सफल किस्में जैसे बरही, खलास, खुनैजी, मेडजूल, खदरावी, सगई जामली उल्लेखनीय है। कुछ किस्में ताजा फलों व कुछ किस्में सूखे खजूर के रूप में उपयुक्त रहती है। खजूर पौधरोपण हेतु प्रति हैक्टेयर 148 मादा पौधे व 8 नर पौधों की कुल 156 पौधों की आवश्यकता रहती है। (नर किस्में अल–इन–सिटी, व घनामी मादा किस्में बरही, खुनैजी, मेडजूल, खलास, खद्रावी, सगई, जामली, अजवा, नाबुत सुल्तान एवं हलवा इत्यादि) खजूर पौधों में डिप पद्धति से ही नियमित रूप से पानी देना आवश्यक रहता है। मिट्टी की संरचना एवं जल धारण क्षमता सिंचाई की आवश्यकता को बहुत तक प्रभावित करती है। खजूर फल वृक्षों से समुचित वानस्पतिक वृद्धि एवं फल प्राप्त करने के लिए भूमि में न्यूनतम 02 फीट गहराई तक नमी रहनी चाहिए। नवीन खजूर बगीचा लगाने वाले इच्छुक कृषक सेंटर ऑफ एक्सीलेंस फॉर खजूर, सगरा भोजका, जैसलमेर पर आयोजित किये जाने वाले कृषक प्रशिक्षण सेमिनार में भाग लेकर खजूर की खेती की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। चयनित कृषक के पास कम से कम 0.5 हैक्टेयर भूमि है एवं सिंचाई का स्त्रोत हो, खजूर बगीचों की स्थापना हेतु पात्र होंगें। खेती की जमाबंदी (06 माह से पुरानी न हो), नक्शा ट्रेस, स्थाई सिंचाई स्त्रोत का प्रमाण, पृथ्क से ड्रिप हेतु आवेदन का प्रमाण, मिट्टी पानी की

जांच रिपोर्ट, बैंक खाता विवरण, आधार/जनआधार कार्ड।

टिश्यूकल्बर तकनीक से उत्पादित पौध रोपण पर कृषकों को अनुदान सहायता प्रति पौधा रु. 3000 या प्रति पौधा ईकाई लागत का 75 प्रतिशत जो भी कम हो देय है।

ऑफशूट तकनीक से उत्पादित खजूर पौधरोपण पर कृषकों को अनुदान सहायता मातृ पौधे से अलगाव के तुंरत बाद के ऑफशूट खजूर प्रति पौधा क्रय मूल्य रू. 1000 का 75 प्रतिशत एवं जड़ विकसित जमाव उपरांत प्लास्टिक थैली सहित खजूर पौधों के क्रय मूल्य 1500 रू का 75 प्रतिशत देय हैं। योजनान्तर्गत एक कृषक को न्यूनतम 0.5 हैक्टेयर व अधिकतम 4.0 हैक्टेयर तक के पौधों पर अनुदान उपलब्ध करवाया जाता है।

अरब देशों में खजूर फल पूर्ण परिपक्व होने पर पेड़ से काटकर उतारे जाते हैं। उन देशों की भूमध्य सागरीय जलवायु में वर्षा अक्टूबर–नवम्बर के बाद ही होती है। अतः पेड पर फल पकाने की क्रिया में बाधा नहीं आती है। बीकानेर में फल पकने के समय वर्षा प्रारंभ हो जाने से पेड़ पर पूर्ण परिपक्वता प्राप्त करना संभव नहीं। अतः यहां फलों के गुच्छों को डोका अवस्था में ही पेड़ों से काट लिया जाता है। कम वर्षा वाले क्षेत्र में भी तुड़ाई प्रायः डांग अवस्था में की जाती है। छुहारा बनाने के लिए भी डोका अवस्था में ही तोड़ा जाता है। खजूर के वृक्ष को पूर्ण फल आने में लगभग 4 वर्ष का समय लग जाता है। टिश्यू कल्वर से तैयार पौधों में तीसरे वर्ष से ही फल आना शुरू हो जाते हैं। दस वर्ष की आयु के वृक्षों से प्रति वृक्ष औसतन 80 किलोग्राम डोका फलों की उपज होती है जो 15 वर्ष की आयु के वृक्षों से लगभग 100 से 200 किलोग्राम तक हो जाती है। वैस खजूर प्रौद्योगिकियों का प्रयोग करके 8 मीटर फासले पर लगे खजूर के 15 वर्ष की आयु के वृक्षों से अनुमानतः रूपये 2,00,000 प्रति वर्ष प्रति हैक्टेयर का शुद्ध लाभ अर्जित किया जा सकती है।

छुहारा बनाने हेतु पूर्ण डोका फलों को अच्छी प्रकार से जल से धोने के पश्चात 5–10 मिनट गर्म पानी में उबालकर 45–50 डिग्री सेल्सियस तापक्रम पर वायु संचारित भट्टी में 70–95 घंटो के लिये सुखाते हैं।

पके हुये फलों को टोकरियों में 5.5–7.2 डिग्री सेल्सियस तापक्रम पर तथा 85–90 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता में शीतगृह में 2 सप्ताह तक भण्डारित किया जा सकता है। छुहारों को 1 से 11 डिग्री सेल्सियस तापक्रम व 65–70 प्रतिशत सापेक्षित आर्द्रता में 13 महीनों तक भण्डारित किया जा सकता है।

राज्य में क्षेत्र तथा उत्पादन लगातार बढ़ रहे हैं। शुष्क जलवायु उच्च तापमान और उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था होने पर यह फसल कम पानी वाले अन्य फसलों की तुलना में आकर्षक आय दे सकती है।

SHAMRAN

I ♥ CIAH